वैकुण्ठ का विल

मूल लेखक

डाक्टर शरच्चन्द्र चट्टोपाध्याय



अनुवादक

लल्लीप्रसाद पाण्डेय

प्रकाशक

इण्डियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

१९४५

दूसरा संस्करण]   [मूल्य ॥≡)

Printed and Published by K. Mittra,
at the Indian Press, Ltd.,
Allahabad.

आभास

"वैकुण्ठ का वसीयतनामा" लिखते समय शरद् बाबू डाक्टर नहीं बनाये गये थे और हिन्दी में इसके प्रकाशित होते समय अब वे इस संसार से ही उठ गये; लेकिन उनका पाञ्चभौतिक शरीर न रहने पर भी उनका यशःशरीर तो अक्षुण्ण है।

शरद् बाबू के आलोचकों ने उनकी कृतियों की आलोचना अनेक प्रकार से की है, किन्तु उनकी विलक्षण प्रतिभा का लोहा सभी ने माना है। उनकी कृतियों में इस लेखक ने अधिकांश स्थलों में एक बात देखी है और वह है उनके स्त्री-पात्रों का उत्कर्ष। उनके उपन्यासों की स्त्रियाँ प्रायः साधारण गृहस्थी सँभालती पाई जाती हैं। एक तो उनमें पाश्चात्य शिक्षा से शिक्षित-दीक्षित कोई होती नहीं है और भूले-भटके कोई उनके पात्रों में आ भी जाती है तो वह हिन्दू घर के बन्धनों को तोड़कर अपनी मिट्टी पलीद कर लेती है, जैसे 'गृहदाह' की अचला। फिर भी शरद् बाबू उसको ऐसी परिस्थिति में पहुँचा देते हैं कि उसके साथ बहुत लोगों को सहानुभूति हो जाती है। वे उसके चरित्र को ऐसा नहीं अंकित करते जिसमें उसके प्रति लोगों के मन में घृणा का भाव उत्पन्न हो। मँझली दीदी, बड़ी दीदी, परिणीता, अरक्षणीया, लेन-देन, देहाती समाज, चन्द्रनाथ, पण्डितजी आदि के पात्र इसके प्रमाण हैं।

"वैकुण्ठ का विल' देहात की घटना से सम्बद्ध है और शरद् बाबू की दृष्टि देहाती दुनिया पर विशेष रूप से रही है। वे उसकी नस-नस से परिचित थे। वे जानते थे कि देहात की स्त्रियाँ किस तरह की बातचीत करती हैं, उनके हृदय में ईर्ष्या-द्वेष और सहानुभूति किस मात्रा में रहती और कैसा अवसर पाकर प्रकट हो जाती है। इस उपन्यास की वर्ण्य वस्तु

साधारण है।—बाबूगंज का वैकुण्ठ मजूमदार परचूनी की दूकान करता था। बड़ी कठिनाइयाँ झेलकर किसी तरह उसकी दूकान जमी तो स्त्री चल बसी; आगा-पीछा सोचने के बाद उसने डरते-डरते दूसरा विवाह किया। भाग्य से स्त्री, भवानी, सुशीला मिल गई और सौत के लड़के गोकुल पर सगे लड़के का सा स्नेह करने लगी। गोकुल पढ़ने-लिखने में तेज़ न निकला, इससे बाप ने उसे दूकानदारी में लगा दिया। लेकिन दूसरी स्त्री का बेटा विनोद पढ़ने-लिखने में होशियार निकला। वह एम० ए० में पढ़ रहा था कि वैकुण्ठ को परलोक का परवाना मिल गया। इससे पहले विनोद के आचरण की सूचनाओं से दुखी होकर उसने अपनी सम्पत्ति की वसीअत गोकुल के नाम कर दी। विनोद की मा भवानी ने वसीयतनामे पर दस्तख़त किये। वैकुण्ठ की तेरहीं के समय विनोद आ तो गया; लेकिन इससे पहले ही गोकुल के ससुर निमाई राय आ धमके। उन्हें गोकुल की पत्नी ने, पति के भोलेपन से संपत्ति के चौपट हो जाने की आशंका से, बुलवाया था। तेरहीं से पहले ही उन लोगों ने ऐसा चक्र चलाया जिसमें विनोद और उसकी मा भवानी घर छोड़कर अलग जा रहें; दूकान का विश्वस्त नौकर चक्रवर्ती अलग कर दिया जाय और सब कुछ गोकुल के ससुर और साले के हाथ में आ जाय। इस जाल में सहायता करने को उन्हें गाँव में ही सहायक मिल गये; मज़ा यह कि उक्त सहायकों ने वैकुण्ठ का नमक खाया था। किन्तु गोकुल भोला-भाला और सीधा-सादा होने पर भी पक्का मातृ-पितृ-भक्त था। समधी और उनकी बेटी मनोरमा के तानों-तिसनों से ऊब कर भवानी भी विनोद के डेरे पर, दूसरे मुहल्ले में, रहने लगीं। उनको रोकने में सफलता न मिलने से गोकुल को बड़ा कष्ट हुआ। इसके बाद घटना-क्रम से गोकुल ने ससुर को एक दिन वह फटकार बतलाई कि जिसका नाम और पत्नी मनोरमा को तो उसने कभी सिर चढ़ाया ही नहीं। भाई के डेरे पर वह कुल दो बार गया। एक बार तो ब्रह्मभोज

कराने और दूसरी बार अपनी बरस-गाँठ के दिन माता के हाथ का प्रसाद पाने; सो प्रसाद तो मिलने ही नहीं पाया, उस दिन कदाचित् उसको दिन-रात निराहार रहना पड़ा और ब्रह्मभोज के दिन एक बूढ़े मास्टर ने उसी के माल पर हाथ मार कर उसको ऐसा ताना मारा कि बेचारे को भागते ही बना; लेकिन उस ताने की चोट विनोद के दिल में भी ज़ोर से लगी जिसको खुश करने के लिए वह मारा गया था।

अब देहात के कुछ चपट आदमियों ने यह जाल रचा कि किसी तरह गोकुल को फाँसकर विनोद को उसका हिस्सा दिलवा दिया जाय; क्योंकि वसीयतनामे के कारण बटवारे की नालिश नहीं हो सकती थी। विनोद को साथ लेकर लोग गोकुल के घर पहुँचे। उसको बिठाकर बटवारे का प्रस्ताव कर दिया गया। प्रस्ताव को सुनकर गोकुल नाराज़ हो गया। उसने साफ़ कह दिया कि विनोद कानी कौड़ी नहीं पा सकता; वह शराबी है। हाँ, अगर वह सुधर जाय तो अपना हिस्सा ले ले। गाँव के बुड्ढे मास्टर ने जब भय दिखलाया कि अदालत में ले जाकर भवानी से गवाही दिलाकर विनोद का हिस्सा लिया जायगा तब तो गोकुल आपे से बाहर हो गया। वह बोला—"मेरी मा को अदालत में खड़ा करेगा?...ले जाओ सारी जायदाद। मुझे न चाहिए।...... मा के साथ मैं काशी जा रहूँगा।" फिर चिल्लाकर विनोद से कहा—अभागे, इधर आ। मेरा पैर छूकर कह कि तेरा बड़ा भाई जालसाज़ दग़ाबाज़ है, मैं सारी जायदाद से इसी दम अलग न हो जाऊँ तो वैकुण्ठ मजूमदार का बेटा नहीं।

इस पेंच से निमाई राय बेहद घबरा गये। विनोद के इष्ट-मित्रों को मौक़ा मिल गया। वे इससे लाभ उठाने के लिए विनोद को ठेलने लगे। विनोद को उठना पड़ा लेकिन किया उसने मित्रों की मर्ज़ी के बिलकुल विपरीत। उसने कहा—तुम्हारा पैर छूकर जो मैं तुम्हीं को जालसाज़ कहूँगा तो मेरा दाहना हाथ यहीं पर टूटकर गिर पड़ेगा।...

आज यही पैर छूकर सौगन्द खाकर कहता हूँ कि अब मैं शराब छूने का नहीं। असीस दो दादा, जिसमें आज से मैं अपने को तुम्हारा छोटा भाई कह सकूँ। तुम्हारी मान-मर्यादा रख कर तुम्हारे चरणों के आश्रय-में ही अपनी ज़िन्दगी बिता सकूँ।

पता नहीं, विनोद अपनी प्रतिज्ञा को कहाँ तक निभा सका। किन्तु इसी स्थान पर पुस्तक की समाप्ति हो जाने से सारे झगड़े-बखेड़े की इतिश्री हो गई। दो भाइयों को लड़ाकर जिन्होंने मुक़दमेबाज़ी से लाभ उठाने के मन्सूबे बाँध रक्खे होंगे उनके मुँह में कालिख पुत गई। निमाई राय को भी बेटी-दामाद का उपकार करने का अवसर न मिला होगा और गोकुल! वह भोला-भाला, किसी की लल्लो-चप्पो में घड़ी भर भले ही आ जाय, पर अन्त में सत्पथ पर पहुँचने वाला सच्चा आदमी है। परमेश्वर ने उसकी बात रख ली।

शरद् बाबू ने गोकुल के भोलेपन को अंकित करने में कमाल कर दिया है। अगर कोई मा भवानी की या भाई की शिकायत करता है तो वह उसी दम बमगोले की तरह फट पड़ता है, लेकिन थोड़ी देर में उसका हृदय निर्मल हो जाता है। जब वह मा को फटकार बतलाता है तो जान पड़ता है कि अब यह उनसे कभी कुछ सरोकार न रक्खेगा, लेकिन घण्टे भर में ही वह छोटे से बच्चे की तरह उनसे इस तरह सलाह लेने जाता है मानो कोई बात हुई ही नहीं। स्त्री कान भरती है तो वह गुस्से में भर जाता है, जाकर मा पर उबल पड़ता है और फिर शाम को जाकर पानी-पानी हो जाता है। वह नाराज़ी में भवानी को सौतेली मा कह देता है सही, लेकिन उसे सौतेली और सगी माता का भेद कब मालूम है। उसके लिए तो सौतेली और सगी जो कुछ है, भवानी हैं। वह दूसरों के बहकाने में आकर भी मा की आज्ञा को नहीं टाल सकता—उन्हीं को असली वसीयत मानता है।

और भवानी! सौतेली मा होकर भी वे गोकुल को अपना सगा

बेटा समझती हैं। मनोरमा के व्यंग्यों से व्यथित होकर उन्हें एक बार दुःख ज़रूर हुआ कि क्यों गोकुल के नाम वसीयतनामा लिखवाया लेकिन विनोद का चाल-चलन देखकर उन्होंने वसीयत को ही ठीक समझा। विनोद के डेरे पर रहकर भी वे गोकुल के ही पक्ष में रहीं। गोकुल के लिए उनका रोम-रोम रोता था और अन्त में उनके आशीर्वाद से गोकुल का मुख उज्ज्वल हुआ।

बनर्जी मास्टर तो सभी जगह हैं। उनका काम हाँजी-हाँजी करके अपनी मुट्ठी गरम करना होता है। जिस ओर से उन्हें लाभ की आशा होगी वे उसी ओर खड़े दीखेंगे।

—अनुवादक

वैकुण्ठ का विल

[१]

पाँच-छः वर्ष पहले बाबूगञ्ज के वैकुण्ठ मजूमदार की परचून की दूकान जब अनेक प्रकार की विघ्न-बाधाओं को पार करके भली भाँति चलती रही तब बहुत लोगों को अचरज होने लगा, क्योंकि यह कोई भी न जानता था कि वैकुण्ठ ने अपना कारबार किस हिकमत से सँभाल लिया है। तब से दूकान की धीरे-धीरे उन्नति होने लगी।

जब पहले की तरह दुःख और चिन्ताएँ न रहीं और वैकुण्ठ ने अपने बड़े बेटे गोकुल का नाम मदरसे से कटवाकर उसे अपनी दूकान के काम में लगा दिया तब भी मुहल्ले के दस-पाँच आदमियों को कुछ कम आश्चर्य नहीं हुआ। वे लोग आपस में वैकुण्ठ के सम्बन्ध में कहने लगे—देख लिया न बुड्ढे का बर्ताव! मान लिया कि लड़का तेज़ नहीं—कुन्दज़ेहन है; एक साल इम्तिहान पास नहीं कर सका तो इसी से यह कर डाला! यदि उसकी मा ज़िन्दा होती तो क्या ऐसी बात हो सकती थी! हम तो उसे तब मर्द समझें जब वह अपने छोटे लड़के विनोद का भी इसी तरह स्कूल से नाम कटा ले! तब तो छोटी (वैकुण्ठ की द्वितीय पत्नी) बच्चाजी का नाक में दम कर देगी।

यह सच है कि गोकुल बुद्धिमान न था, कुछ बोदा था। अपने दर्जे में वह किसी दिन अच्छा सबक़ न सुना सकता था। जब परीक्षा का फल सुनाया गया तब रोनी सूरत बनाकर वह अपनी सौतेली मा के पास आकर आँसू बहाने लगा।

सौतेली मा ने उसे गोद में बैठाकर, स्नेह से उसके माथे और मुँह पर हाथ फेरकर, मीठे स्वर में कहा—बेटा, खेद किस बात का है। बड़ी उमरवाले के लिए ऐसे-ऐसे न जाने कितने दुःख सहने पड़ते हैं। जो लड़का हँसते-हँसते इन कष्टों को सहकर मेहनत करता जाता है वही तो सच्चा लड़का है। बेटा! रोना छोड़ो, मन लगाकर दुबारा पढ़ो, अगले साल पास हो जाओगे।

छोटा लड़का विनोद खुशी के मारे उछलता-कूदता घर आया। वह अपने बड़े भाई गोकुल से कोई छः साल छोटा है, तीन-चार क्लास नीचे पढ़ता है; किन्तु उसे एकदम डबल प्रमोशन मिला है। वह अपने दर्जे में अव्वल आया है। बेटे का मङ्गल-संवाद सुनकर मा ने उसे भी गोद में जगह दी और गद्गद होकर असीस दी। शाम को दिया-बत्ती लग जाने पर वैकुण्ठ दूकान बढ़ाकर बहीखाता बग़ल में दबाये घर आये। दोनों बेटों की परीक्षा का फल सुनकर उन्होंने भला-बुरा कुछ भी न कहा। लड़कों की मा को उनका भार सौंपकर वैकुण्ठ बे-खटके थे। हाथ-पैर धोकर उन्होंने जल-पान किया, फिर पान चाबते हुए आराम से अपना नियमित हिसाब-किताब देखने लगे।

[२]

"मेरी मा भवानी कहाँ हैं ?" कहते हुए मदरसे के छठे मास्टर बूढ़े जयलाल बनर्जी लाठी को दो-तीन बार ठक-ठक करके उसी दिन, शाम को, वैकुण्ठ मजूमदार के घर आ खड़े हुए। वैकुण्ठ की दूकान से इन्होंने दाल-चावल-घी-तेल आदि पचीसों रुपये का सौदा उधार लिया था। सौदे का दाम न देकर ये वैकुण्ठ की पत्नी को माँ कहने लगे थे।

सन्ध्या का काम-काज करके भवानी बरामदे में चटाई पर दोनों बेटों को, गोद के दोनों ओर, बैठाये हुए थीं। यह आवाज़ सुनते ही उन्होंने फुर्ती से उठकर आसन बिछा दिया। मास्टर साहब ने बैठते ही कहना आरम्भ किया—मा, तुम तो सचमुच रत्नगर्भा हो! सचमुच तुम्हारी कोख में लड़का था। इतने लड़कों के बीच तुम्हारा विनोद एकदम अव्वल निकला! सबसे सिरे रहा। उसे एकदम डबल प्रमोशन मिला। इसके नम्बर देखकर हेडमास्टर साहब तक चकरा गये। आज उन्हें भी विस्मित होना पड़ा! मा, मैं भी मास्टरी करते-करते ही बुड्ढा हुआ हूँ; किन्तु तुम्हारे विनोद जैसा लड़का मैंने नहीं देखा। मैं आज ही कहे देता हूँ कि यह तुम्हारा बेटा हाईकोर्ट का जज होगा और जरूर होगा।

भवानी चुपचाप सुनती रहीं। बनर्जी महोदय ने उत्साहित होकर और भी कहा—और यह गोकुला! इसके लिए मैं क्या कहूँ। मां, यह बड़ा बोदा है। इम्तिहान के दिन मैं इन लोगों

की चौकसी के लिए पहरे पर था। कितने ही लड़कों ने टेबिल के नीचे किताब खोलकर मजे में नक़ल कर ली—गोकुल की दाहिनी और बाईं ओर मल्लिक के दो लड़के बैठे थे। वे भी किताब खोलकर नक़ल करने लगे। मैंने देखकर भी उधर से नजर हटा ली—इस अभागे को मैंने आँख से इशारा तक किया कि तू भी किताब देख ले, किन्तु यह ऐसा दब्बू बनकर हाथ सिकोड़े बैठा रहा कि किसी तरफ़ आँख उठाकर इसने देखा तक नहीं। तभी तो आशु मल्लिक के लड़के पास हो गये और यह फ़ेल हो गया! मा, उसी से पूछ लो, सच है कि नहीं।

अब जयलाल मास्टर ने अपनी लाठी उठाकर एकाएक गोकुल को कोंचने का अभिनय सा किया, किन्तु लड़कों के पीटने की अपनी पुरानी प्रवृत्ति को किसी प्रकार रोक लिया। परन्तु बेचारा गोकुल इतने ही से डर के मारे दुबक गया। पल भर में भवानी ने दोनों हाथ बढ़ाकर अपने सौत के बेटे को हृदय के पास खींच लिया।

गोकुल के मा नहीं है; उसे अपनी मा की याद तक नहीं। इस सौतेली मा ने ही उसका पालन किया है। आज स्कूल से आते ही जब से वह आँसू बहाता हुआ भवानी के पास आया है तब से उन्होंने उसे अलग नहीं जाने दिया और अब तक मा-बेटे के बीच धीरे धीरे यही बातें हो रही थीं।

गोकुल के माथे पर हाथ फेरकर स्नेहार्द्र मृदु कण्ठ से भवानी ने कहा—हाँ बेटा, और लड़के किताब देखकर नक़ल कर रहे थे और तुमने किसी तरफ़ आँख उठाकर देखा तक नहीं?

गोकुल कुछ उत्तर न दे सका। इसे भी अपनी अयोग्यता का एक बढ़िया प्रमाण समझकर वह लज्जा के मारे गर्दन नीची करके रह गया। किन्तु बातचीत की भनक घर में बैठे वैकुण्ठ के कानों में पहुँच जाने से वे बहीखाते से दृष्टि हटाकर सावधानी से कान खड़े करके सुनने लगे।

भवानी ने मुसकुराकर कहा—इस साल गोकुल .खूब मन लगा कर पढ़ेगा तो अगले साल अव्वल निकलेगा।

सौतेली मा के इस स्नेहार्द्र कण्ठस्वर को मास्टर साहब ने पहचाना नहीं। सौत के बेटे पर स्त्रियों का कुढ़ना मास्टर साहब के लिए सोलहों आने स्वयंसिद्ध सत्य था। इससे वे इस मामले में कहीं कुछ व्यतिक्रम होने की कल्पना तक न कर सकते थे। भवानी के इस व्यवहार को गिरी दिखाऊ शिष्टता समझकर उन्होंने गोकुल को और भी तुच्छ साबित करने के लिए जीभ के द्वारा तालू से एक प्रकार का शब्द उत्पन्न करते हुए कहा—"राम राम! गोकुल होगा अव्वल! तब तो सूर्य का उदय पूर्व से नहीं, पश्चिम से होगा! जो अव्वल होगा वह तो यह तुम्हारे बाईं ओर बैठा है।" उन्होंने उँगली से विनोद को दिखाते हुए सूखी हँसी हँसकर कहा—इतने पर भी छोकरे को कुछ लाज-शर्म नहीं है। उलटा लड़कों के साथ .खुशी मनाता था 'मैं पास नहीं हुआ तो क्या हुआ किन्तु मेरे छोटे भाई ने तो बाज़ी मार ली! वह सबसे सिरे निकला! बतलाओ भला, तुममें से किन-किनके भाइयों को डबल प्रमोशन मिला है?' मा, इसकी

बात तो सुनो ! छोटा भाई इम्तिहान में अव्वल पास हुआ है, इससे उसे लाज के मारे गड़ जाना चाहिए था सो वह उलटा शेखी मार रहा है !

भवानी से अब न रहा गया। उन्होंने गोकुल को ज़ोर से खींचकर उसके माथे को अपनी छाती से लगा लिया। बेचारे गोकुल ने शर्म में मारे सिकुड़कर मा के वक्षःस्थल में सिर छिपा लिया।

भवानी जानती थीं कि गोकुल अपने छोटे भाई को जी-जान से चाहता है।

मास्टर साहब ने और भी चुनी हुई बातें कहकर भवानी को यही सूचित करना चाहा था कि अपने विनोद के पढ़ाने के लिए अभी से घर पर एक होशियार मास्टर रख लीजिए जो शाम-सवेरे पढ़ा जाया करे, किन्तु इसी समय अकस्मात् बग़ल के कमरे से रोशनी की झलक मा-बेटे के ऊपर पड़ी। इससे मास्टर साहब के दिल में खटका हो गया।

इस अबोध सौतेले बेटे को छाती से लगाकर भवानी उसके माथे पर जिस तरह हाथ फेर रही थीं उसमें मास्टर साहब को कुछ कसर जान पड़ी। अतएव वे यह निर्णय न कर सके कि इस तुलनामूलक समालोचना को और आगे बढ़ाया जाय अथवा रोक दिया जाय, इसलिए उन्होंने बातचीत का सिलसिला बदल दिया।

भवानी अब तक एक तरह से चुपचाप सुन रही थीं। इस समय भी उन्होंने अधिक बात-चीत नहीं की। अन्त में "रात

हो रही है" कहकर मास्टर साहब अनेक प्रकार से आशीर्वचनों का उच्चारण करते और भविष्यत् में विनोद के लिए जज-पद-प्राप्ति की सम्भावना को बार-बार बेखटके सूचित करते हुए हाथ में लाठी लेकर खड़े हो गये।

कमरे में वैकुण्ठ मानो इसी अवसर की ताक में बैठे थे। सामने आकर उन्होंने कड़ी आवाज़ में पूछा—क्यों रे गोकुला, सब लड़के चोरी से किताब देखकर सही जवाब लिख करके पास हो गये और तू आँखें मूँदे बैठा रहा? तूने क्यों न लिखा?

डर के मारे सिकुड़कर गोकुल पहले की तरह सिर नीचा किये बैठा रहा। तरह-तरह की धमकियाँ सुनकर गोकुल ने जो कुछ कहा उसका भावार्थ यह था—दोपहर से पहले हेड मास्टर आकर मना कर गये थे कि खबरदार; चोरी से किताब देखकर या किसी दूसरे का देखकर मत लिखना।

वैकुण्ठ ने थोड़ी देर तक चुपचाप कुछ सोचा और फिर कहा—कल से मदरसे मत जाना। मेरे साथ दूकान पर चलना।

वैकुण्ठ फिर अपने कमरे में जाकर हिसाब-किताब जाँचने लगे। इसे मामूली धमकी समझ कर भवानी उस समय चुप रहीं, किन्तु सवेरा होने पर वैकुण्ठ ने जब सचमुच गोकुल को दूकान ले जाना चाहा तब भवानी ने नाराज़ होकर असम्मति जताते हुए कहा—वाह बा! तुम्हारी बातें विचित्र हुआ करती हैं। जरा सा बच्चा तुम्हारी दूकान चलाने जायगा! यह होने का

नहीं—जब तक मैं ज़िन्दा हूँ तब तक गोकुल मदरसा नहीं छोड़ सकता। यह भी कोई .गुस्सा है !

क्रोध के मारे भवानी गोकुल का हाथ पकड़कर दूसरी ओर जा रही थीं कि वैकुण्ठ ने तनिक मुसकुराकर कहा—कौन नाराज़ हो रहा है छोटी ?

"तुम, और कौन ?"

"भला हमें कभी नाराज़ होते देखा भी है ?"

"तो फिर यह कैसी बात है ? बचपन में पास-फ़ेल सभी होते हैं। फ़ेल होने ही से क्या तुम उसे मदरसे न जाने दोगे ?"

अब वैकुण्ठ ने गोकुल को तो किसी बहाने वहाँ से हटा दिया और हँसकर कहा—छोटी, मैं नाराज़ नहीं हुआ। तुम्हारे बड़े लड़के को आज मैं बड़ी .खुशी से दूकान पर लिये जाता हूँ। तुम्हारा छोटा लड़का कभी जज होगा या नहीं, इसका भरोसा मुझे मास्टर साहब की तरह तो है नहीं, किन्तु यह विश्वास ज़रूर है कि अपने न रहने पर मैं तुम लोगों को गोकुल के भरोसे छोड़ सकूँगा।

स्वामी के 'न रहने' की बात से भवानी की आँखें पल भर में सजल हो गईं। उन्होंने उत्तर दिया—मैं यह जानती हूँ। किन्तु मेरा गोकुल तो बड़ा भोला-भाला है। भला वह तुम्हारे दूकानदारी के दाँव-पेंच समझ सकेगा ? शायद उसे सभी लोग मूँड़ लें।

वैकुण्ठ ने हँसकर कहा—सब लोग न मूँड़ेंगे। हाँ, कोई-कोई ऐसा करेगा। यह बात सच है। सो ठग लें, किन्तु वह तो किसी

को न ठगेगा। बस, इतना ही चाहिए। लक्ष्मीजी अपने आप उस पर कृपा करेंगी।

यह कहते-कहते वैकुण्ठ की आँखें भी गीली हो गईं। वे स्वयं सच्चे हैं, किन्तु पास में पूँजी न रहने से उन्हें बहुत दिनों तक भटकना पड़ा है, ठोकरें खानी पड़ी हैं। माना कि अब उनका हाथ बिलकुल छूँछा नहीं है, पर अब तो वे स्वयं जीवन-सरिता के किनारे पहुँचने को हैं। पहले की सी काम-काज करने की शक्ति भी नहीं है। चटपट आँखें पोंछकर उन्होंने मुसकुराकर उत्तर दिया—छोटी, शायद तुम न समझ सकोगी कि इसी छोटी-सी उम्र में ही गोकुल ने जितने बड़े लोभ को धता बता दी है, वह कितनी हिम्मत की बात है। जो रोज़गार यह कर सकता है उसके तो दाँव-पेंच चौदह आने सीखे-सिखाये हैं। बाक़ी जो दो आने हैं वे मैं सिखला जाऊँगा।

"किन्तु लोग क्या कहेंगे?"

"लोगों की बातों को मैं नहीं जानता छोटी! मैं तो अपनी बातें ही जानता हूँ। मैं जानता हूँ कि उसके हाथ में तुम्हें सौंपकर मैं बेखटके आँखें मूँद सकूँगा।"

भवानी स्वयं भी कुछ दिनों से देख रही थीं कि उनके स्वामी का स्वास्थ्य मानो दिन पर दिन ख़राब होता जा रहा है। उनकी अन्तिम बात से एक आसन्न-विपत्ति का अनुभव करके भवानी ने आँसू बहाते हुए कहा—अच्छा तो लेते जाओ।

भवानी ने स्वयं गोकुल को बुला लाकर स्वामी के सिपुर्द कर दिया और लड़के का मुँह चूमकर कहा—बेटा; अपने बाबूजी के साथ दूकान पर जाओ। तुम्हारे होशियार होने से ही हम लोगों का निर्वाह होगा।

मा-बाप के मुँह की ओर देखने से गोकुल को अचरज हुआ। बेचारे ने रात को बिछौने पर पड़े-पड़े मन में पतिज्ञा की थी कि इस साल जैसे भी होगा, पास हो जाऊँगा।

स्कूल का पढ़ना-लिखना छोड़कर दूकान जाना कोई भी लड़का अच्छा नहीं समझता; गोकुल का भी यही हाल हुआ। किन्तु माता के क़ाबू के बाहर वह कभी था ही नहीं। मदरसे के साथी लड़के उसे चिढ़ाने लगे। बेचारे को उनके खोंचे बहुत ही खलते थे, किन्तु उसने दूकान जाने में तनिक भी आनाकानी नहीं की, चुपचाप पिता के पीछे-पीछे हो गया।

[३]

दस वर्ष हो गये। बुढ़ापे से पछाड़ जा रहे वैकुण्ठ मरने को तैयार बैठे हैं। किन्तु गोकुल के सम्बन्ध में उन्होंने भूल नहीं की, यह बात उनके घर पर एक नज़र डालने से ही स्पष्ट हो जाती है। 'गोले' के भीतर अब वह मामूली सी परचून की दूकान नहीं है। उसके बदले में बड़ी भारी दूकान है, जहाँ से थोकबन्द सौदा होता है। लाखों का रोज़गार है। विनोद कलकत्ते में एम० ए० पढ़ रहा है। पोते-पोतियों का मुँह देखकर वैकुण्ठ को मरने में

तनिक भी क्लेश न होता, किन्तु कुछ दिनों से छोटे लड़के के सम्बन्ध में अनेक प्रकार की कुत्सित जनश्रुति सुनने से उनकी बची हुई जिन्दगी काटे नहीं कटती। एक-एक दिन वर्ष से बड़ा जँचता है।

एक दिन सवेरे वैकुण्ठ ने जीवन की अन्तिम पुकार सुनी। नींद खुली तो सारे बदन में एक नये ढंग की बेचैनी थी। उन्होंने गृहिणी को बिस्तर के पास बुलाकर उदास मुँह से तनिक मुसकुरा-कर कहा—छोटी, मेरा तो समय पूरा हो गया। मैं तनिक आगे-आगे बढ़ता हूँ। तुम जब तक मेरे पास न पहुँचो, मेरे बेटों की देख-भाल करना। दोनों तुम्हारी गोद में हैं।

स्वामी के दुबले-पतले हाथ को अपने हाथों में लेकर भवानी आँसू गिराने लगीं।

वैकुण्ठ ने कहा—गोकुल को छोड़कर उसकी मा मर गई थी। दूसरा ब्याह करने की मुझे इच्छा ही न थी। मैं किसी तरह ब्याह न करता; किन्तु जब देखा कि अकेला मैं गोकुल को ही शायद पाल-पोस न सकूँगा तब बड़े कष्ट से डरते डरते राजी हुआ था। भगवान् मेरे मन की बात जानते थे। इसी से उन्होंने दया करके ऐसी स्त्री दी कि मुझे किसी दिन तनिक सा भी दुःख नहीं हुआ; यदि इस अन्त-समय में विनोद भी मुझे सुखी रहने देता तो मैं आज बड़े आराम से बेखटके जा सकता।

यह कहते-कहते वैकुण्ठ की म्लान आँखों में आँसू आ गये। भवानी ने अपने आँचल से उनके तो आँसू पोंछ दिये, किन्तु

अपनी आँखों को क्या करतीं, जो किसी तरह आसुओं को रोकने में समर्थ न हुईं।

वैकुण्ठ ने कहा—छोटी, मैं मर भी तो नहीं सकता। मेरी आँखें मुँदने पर मेरी इतनी मेहनत और मुसीबत की दूकान को पाकर विनोद दो दिन में बर्बाद कर डालेगा। परलोक में बैठे रहने पर भी मुझसे यह दुःख सहा न जायगा। इस दुःख से वहाँ भी मेरी छाती फटेगी। तनिक रुककर कहा—यही क्यों? तुम्हारे निर्वाह का भी कुछ उपाय न रह जायगा—और कदाचित् गोकुल को भी बाल-बच्चों समेत दर-दर मारा-मारा फिरना पड़े।

यह कहते-कहते डर के मारे वैकुण्ठ काँपने लगे। इस दुर्घटना की कल्पना से ही उनके हृदय की धड़कन बन्द हो जाने की आशङ्का हुई। भवानी ने चटपट स्वामी के मुँह के पास अपना मुँह करके रोकर कहा—तो तुम विनोद को कुछ मत दो। अपना पसीना बहाकर तुमने जो चीज पैदा की है वह मैं किसी को न दूँगी। मकान, दूकान, जायदाद सब तुम गोकुल के नाम लिख जाना। तुम हिम्मत बाँधो—खटका छोड़ो—मैं स्वयं इसकी गवाह रहूँगी।

वैकुण्ठ ने तनिक स्त्री के चेहरे की ओर देखा फिर साँस छोड़-कर कहा—छोटी, मैं दिन-रात यही बात सोचता रहता हूँ—जी लगाकर मैं भगवान का नाम तक नहीं ले सकता। किन्तु इसमें क्या तुम राज़ी हो? वैकुण्ठ ने निराश भाव से और एक ठंढी साँस छोड़ी।

भवानी का मानो कलेजा दो टूक हो गया। उन्होंने मौत के मेहमान होने के लिए तैयार स्वामी की छाती पर झुककर रुँधे हुए स्वर से कहा—हाँ, मैं हर तरह से राज़ी हूँ। तुम्हारे पैर छूकर कहती हूँ कि मुझे कुछ उज्र नहीं। मुझे कुछ न चाहिए; मैं तो तुम्हें निश्चिन्त—तुम्हें तन्दुरुस्त देखना चाहती हूँ। मैं इस समय तुम्हारे मन में किसी तरह का क्लेश या खटका नहीं रहने देना चाहती।

वैकुण्ठ ने तनिक चुप रहकर फिर धीरे-धीरे कहा—किन्तु विनोद ?

भवानी ने तुरन्त उत्तर दिया—तुम उसकी फ़िक्र छोड़ दो। वह पढ़-लिख रहा है—अपने लिए आप उपाय कर लेगा। और वह कितना ही बुरा क्यों न हो, गोकुल उसे निकाल न देगा—छोटे भाई का ख़याल वह ज़रूर रक्खेगा।

वैकुण्ठ ने और कुछ बातचीत न की। सन्तोष की साँस लेकर धीरे-धीरे करवट बदली। भवानी वहीं पर एक ही आसन से पत्थर की पुतली की भाँति बैठी रहीं। भारी अभिमान के मारे उनकी आँखों से आँसू बहने लगे। उनकी कोख से उपजी सन्तान पर स्वामी ने विश्वास न किया, उसे कुपूत कहकर मरते समय इन्होंने बेटे का न्याय्य-अधिकार छीन लेने का इरादा किया है—इस दुःख ने भवानी के कलेजे में जो शूल की सी हूल पैदा कर दी इसे वैकुण्ठ ने एक बार भी नहीं देखा। बेटा भला हो या बुरा, वे तो माँ हैं। वह आख़िर उन्हीं का बेटा है। उस

अभागे बेटे के अन्धकारपूर्ण भविष्यत् को स्पष्ट देखकर अब उनका मातृहृदय सिर धुन-धुनकर रोने लगा। किन्तु पीछे हटकर बचाव का कोई उपाय किसी ओर उन्हें ढूँढ़ने पर भी न सूझा। मुमूर्षु स्वामी को तृप्त करने के लिए सन्तान के सत्यानाश का मार्ग जब उन्होंने स्वयं उँगली से दिखा दिया है तब उनका मुँह देखकर कौन उस मार्ग को अपनी तरफ़ से रोकने आवेगा ?

उसी दिन तीसरे पहर वकील को बुलाकर क़ानूनन विल (वसीअतनामा) लिखा गया। स्थावर-अस्थावर सारी सम्पत्ति वैकुण्ठ ने अपने बड़े बेटे को लिख दी। गवाह की जगह दस्तखत करते समय भवानी का हाथ काँप गया। मातृस्नेह किसी अलक्ष्य स्थान में बैठकर बारम्बार उनके हाथ को दबाने लगा, किन्तु रोक नहीं सका। स्वामी के चरणों को अपने अन्तर में दृढ़ता से स्थापित करके उन्होंने टेढ़े-मेढ़े अक्षरों में अपना नाम लिख दिया।

विनोद को कुछ मालूम न हुआ। वह इस समय कलकत्ते की एक अपवित्र बस्ती में, और उससे भी अपवित्र संसर्ग में, मद्यपान करके मतवाला बना पड़ा रहा। घर से जो दो आदमी उसे बुला लाने के लिए कलकत्ते भेजे गये थे वे दो दिन तक उसके रहने के स्थान में वृथा बाट जोहकर गाँव में लौट आये। वैकुण्ठ को यह खबर देने का साहस किसी को न हुआ। उन्होंने भी इस सम्बन्ध में किसी से कुछ पूछताछ नहीं की। किन्तु उनसे कोई बात छिपी न रही।

खींच-तान में दो दिन और भी बीत गये। आज सवेरे से ही वैकुण्ठ को श्वास का कष्ट होने लगा। दिन भर बेहोश की तरह

पड़े रहकर दिन डूबने से कुछ पहले उन्होंने आँख खोली। भवानी रोगी के सिरहाने बैठी थीं, पैरों के पास बैठा गोकुल रो रहा था। वैकुण्ठ ने इशारे से उसे और भी समीप बुलाकर अत्यन्त क्षीण स्वर से कहा—गोकुल, शायद विनोद को खबर नहीं मिली। खबर मिल जाती तो ज़रूर आता।

यह कहने के साथ ही उनकी आँखों से एक बूँद आँसू टपक पड़ा। इधर—जब से उनके बचने की आशा नहीं रही,—उन्होंने एक बार भी विनोद का नाम मुँह पर नहीं आने दिया। अकस्मात् चलाचली के वक्त स्वामी के मुँह से बेटे का नाम सुनकर धिक्कार और वेदना के मारे भवानी का हृदय फट गया, किन्तु वे उसी तरह चुपचाप नीचे गरदन झुकाये बैठी रहीं।

गोकुल ने जब पिता की आँखें पोंछ दीं तब उन्होंने कहा—मैं उसे नजर भरकर देख नहीं सका, किन्तु उससे कहना 'मैं असीस दे गया हूँ कि वह एक दिन सुधरकर भला हो जायगा।' ऐसी माता के पेट से जन्म लेकर कभी इस तरह जिन्दगी बर्बाद न कर सकेगा। देखना बेटा, मेरे पीछे अपने छोटे भाई को छोड़ न देना। और ये तुम्हारी मां हैं—बड़े पुण्य करने पर ऐसी माता मिलती है गोकुल।

बच्चे की तरह रोते-रोते गोकुल ने कहा—बाबूजी, मेरी मा तो मेरी ही रहेंगी, किन्तु विनोद को सम्पत्ति का आधा हिस्सा दे जाइए।

वैकुण्ठ ने कहा—नहीं गोकुल, मेरी सम्पत्ति बड़े कसाले की

है। उसको चौपट होते देख परलोक में रहने पर भी मेरी छाती फटेगी। यह मैं किसी तरह नहीं सह सकता।

रोगी ने देर तक बेटे के मुँह की ओर देखते रहकर, शायद मन ही मन उसे बहुत बहुत असीस देकर, आंखें मूँद लीं।

पैरों पर गिरकर गोकुल फफक-फफककर रोने लगा। वैकुण्ठ ने बड़े कष्ट से धीरे-धीरे करवट बदलकर बहुत ही धीरे-धीरे कहा—लड़के हैं—छोटी, मैं तो चला।

वैकुण्ठ ने फिर बातचीत नहीं की। दूसरे दिन, दिन निकलते-निकलते, उनके शरीर-पिञ्जर से प्राण-पखेरू उड़ गये।

अब लोग तरह-तरह की बातें करने लगे। वैकुण्ठ पक्के रोज़गारी थे, किन्तु थे दिल के साफ़ और सच्चे। ख़ास कर गिरी हुई दशा से उन्नति करते-करते वे ऊपर पहुँचे थे। इस कारण उनके न तो शत्रु कम थे और न मित्र। मित्र पक्ष ने उनका गुणगान अतिमात्रा में किया। उधर शत्रुओं ने निन्दा करने में कोई बात उठा न रक्खी। वे सूम, मक्खीचूस कहकर वैकुण्ठ बनिये की मोटी उँगली के साथ केले के पेड़ की उपमा देकर शायद कुछ सन्तुष्ट हुए। हाँ, एक तुच्छ गुण की बात से वे लोग भी मुकर न सके कि और चाहे जो हो, आदमी दग़ाबाज़ या ठग न था। अपने पावने से अधिक उसने कभी किसी से एक कौड़ी नहीं ली। उसके पास धोखे-धड़ी का नाम न था। असल में व्यापार के सम्बन्ध में वे यही विद्या अपने बड़े बेटे को विशेष रूप से सिखला गये थे।

वैकुण्ठ बार-बार कहा करते थे—बेटा गोकुल, मेरी यह बात किसी दिन भूल न जाना कि यदि कोई धोखे से ठग ले तो महाजन का दिवाला नहीं हो जाता। ऐसा करने से अन्त तक ख़ुद अपने को ही मरना पड़ता है।

अपने पके बालों के सिर को दिखलाकर वे कहा करते—इस माथे के ऊपर से बहुत से आँधी-तूफ़ान निकल गये हैं गोकुल, क्लेश भी मैंने कम नहीं सहे हैं, किन्तु इसी माथे के बिरते पर कभी किसी के आगे मैंने नीची नज़र नहीं की। बेटा, मेरी यह बात न बिगड़ने पावे।

[४]

विनोद को हिस्सा नहीं मिला, ख़बर फैलते ही अड़ोस-पड़ोस के दो-चार आदमी गाँठ की रक़म ख़र्च करके कलकत्ते पहुँच-कर उसकी खोज करने लगे कि कहाँ रहता है। अब तो कोई बात छिपी न रही। उन्होंने कलकत्ते से वापस आकर विनोद के चाल-चलन, नाम-धाम आदि आदि का परिचय देकर भण्डा-फोड़ कर दिया। किन्तु विचित्रता यह है कि अकृतज्ञ गोकुल ने उनका यह उपकार नहीं माना। वह बिगड़कर गरम मिज़ाज की दशा में कह बैठा—साले सब झूठे हैं। नाहक़ जलापे के मारे ऐसी ख़बरें उड़ा रहे हैं।

बूढ़े बनर्जी बाबू (मास्टर साहब) ने लाठी ठक-ठक करते हुए आकर एकदम रोना शुरू कर दिया। मुश्किल से रोआई बन्द होने पर कहा—अरे गोकुल, मेरे हारान ने खाना-पीना-

सोना सब छोड़कर तीन दिन-रात तक कलकत्ते की गलियों की धूल छानी है। पचीस-तीस रुपये ख़र्च करने पर पता लगा कि वह छोकरा अमुक स्थान में रहता है। भला और कोई उसके पता-ठिकाने का पता लगा सकता था!

गोकुल ने तीखे स्वर में उत्तर दिया—महाशय, मैंने तो रुपया-पैसा ख़र्च करने के लिए किसी के हाथ-पैर नहीं जोड़े थे।

बनर्जी ने अकचकाकर कहा—गोकुल, यह क्या कहते हो! हम तो तुम्हारे ग़ैर नहीं हैं। और लोग चुप रह सकते हैं, किन्तु हम भला कैसे रह सकते हैं।

"अच्छा, जाइए जाइए, अपना काम कीजिए" कहकर गोकुल बड़ी अभद्रता से दूसरी जगह चला गया।

धीरे-धीरे दिन बीतने लगे, किन्तु विनोद के आने की कुछ आशा नहीं। सीधा-सादा शान्तस्वभाव गोकुल बहुत नाराज़ हो गया।

थोड़े ही दिनों में इतना परिवर्त्तन हो गया कि भवानी तो अब पहचानी ही नहीं जातीं। वे चुपचाप सिर झुकाये हुए श्राद्ध (तेरहीं) की तैयारी में रहती हैं—लड़के का नाम तक नहीं लेतीं।

विनोद इधर एक साल से, जब देखो तब, पचासों बहाने करके गोकुल से रुपया लिया करता था। गोकुल की स्त्री मनोरमा ने मामले को पहले ही भाँप लिया था। उसके बार-बार सावधान करते रहने पर भी गोकुल ने ख़याल नहीं किया। आज सवेरे इसका उल्लेख करते ही गोकुल ने बहुत बिगड़कर कहा—गोकुल

जब किसी के बाप का रुपया बर्बाद करेगा तब उन्हें बातचीत करनी चाहिए।

अब उसने फ़ुर्ती से अपनी सौतेली मा के कमरे के सामने आकर ज़ोर से कहा—औरतों की सलाह से चलकर इतना बड़ा रावण राजा मर मिटा, फिर मनुष्य है किस लेखे में! किसने गुपचुप बाबूजी को कान में सलाह दी थी मा कि विल लिख दो। मुझे तो सब तरफ़ से किसी काम का न रहने दिया।

भवानी ने अचरज करके ज्यों ही उसकी ओर देखा त्यों ही वह हाथ नचाकर, पैर पटककर, क्रोध का रूप दिखलाता हुआ कह बैठा—मा, तुम्हें तो मैं बहुत ही भोली-भाली जानता था, लेकिन तुम भी कम नहीं हो! औरत की जात ही ऐसी होती है!

"मरे को मारै शाह मदार"; वैधव्य-क्लेश और पुत्र की दशा से बेचैन हो रही भवानी को इस प्रकार सताकर गोकुल चट से वहाँ से चलता हुआ।

गोकुल एक तो दूकानदार है, दूसरे पढ़ा-लिखा नहीं, मूर्ख है; यही बात सब लोग जानते थे। ख़ास कर जब वह ग़ुस्से में होता तब उसकी ज़बान बेलगाम हो जाती थी। यह भी सबको मालूम था। किन्तु उसकी आजकल की बातचीत और बर्ताव सीमा को अतिक्रमण कर 'अति' कहलाने लगा है। क्या घर के और क्या बाहर के, सभी की यह राय हुई।

तीसरे पहर बनर्जी बाबू दिवस-निद्रा से उठकर हाथ-मुँह धो रहे थे। अकस्मात् उनके घर गोकुल पहुँचा। उस दिन गोकुल यद्यपि उनका अपमान कर चुका था, तो भी वह मालदार असामी है। इसलिए उसके आने से बूढ़े बनर्जी झटपट उठ खड़े हुए।

गोकुल ने ब्राह्मण के पैरों के पास तीन क़िता नोट रखकर मलिनमुख किन्तु विनम्र स्वर से कहा—मास्टर साहब, हारान का उस दिन का राह-ख़र्च देने आया हूँ।

"रहने दे, रहने दे, उसके लिए ऐसी क्या उतावली है भाई—तुमसे बहुत कुछ लेते हैं, तुम्हारे यहाँ से तो पालन होना है" कहकर बनर्जी ने तीनों नोट उठा लिये।

गोकुल की आँखों से आँसू गिरने लगे। दुपट्टे से आँखें पोंछकर बोला—मास्टर साहब, विनोद तो आज तक नहीं आया। हारान को साथ लेकर मैं एक बार उसके पास जाऊँगा।

बनर्जी बाबू ने ज़ोर से अपना शरीर हिलाकर कहा—छि छि, ऐसी बात मुँह से मत कहो। मेरे हारान के रहते भला तुम उस जगह जाओगे? नहीं-नहीं, यह नहीं होने का। मैं उसे कल ही भेज दूँगा।

गोकुल ने सिर हिलाकर कहा—नहीं मास्टर साहब, मेरे गये बिना काम न होगा। वह अपनी टेक का पक्का है। 'विल' की बात सुनकर ही अभिमान के मारे नहीं आता। बिना मेरे

मुँह से सुने वह किसी की बात पर विश्वास न करेगा! मा-बाप ने मेरा सत्यानाश कर डाला।

गोकुल एकाएक दुखी भाव से रोने लगा। बनर्जी ने उसे कई तरह से दिलासा देकर बार-बार प्रतिज्ञा की कि तेरा इस दशा में वहाँ जाना किसी तरह ठीक नहीं, मैं कल ही उसे हारान के द्वारा बुलवा दूँगा।

कोई उपाय न था। इससे हारान के राह-खर्च के लिए पाँच क़िता नोट देकर गोकुल आँखें पोंछता हुआ घर लौट आया।

[५]

जयलाल मास्टर को गोकुल गुप्त रीति से अस्सी रुपये रिशवत दे आया है, यह बात प्रकट होते ही बहुत लोगों ने उसकी इस निर्बुद्धिता को लक्ष्य करके ताने दिये हैं। वह तो विनोद के लिए बेचैन हो रहा है और विनोद उसकी रत्ती भर भी परवा नहीं करता—इस ढङ्ग का आभास भी घर भर के लोगों की आँखों और चेहरों से पाकर गोकुल भीतर ही भीतर अत्यन्त सङ्कुचित हो रहा था।

विनोद के लिए घर की घोड़ागाड़ी शायद चूँचुड़ा स्टेशन की पूरे दस बार हवा खा आई है। गोकुल ने नाराज़ होकर कोचवान से पूछा—तो क्या अब कलकत्ते से आनेवाली सभी गाड़ियाँ निकल गईं जो तुम लोग लौट आये? जाओ, जाओ, आराम कर लो।

कोचवान ने अदब से कहा—दो गाड़ियाँ अभी और आवेंगी। किन्तु घोड़े को घास-दाना नहीं दिया था, इससे लौट आया हूँ सरकार।

गोकुल बहुत ही बिगड़ा। धमकाकर बोला—छोटा बाबू तो हलुवा-पूरी उड़ाकर आता है न, इसी से पाजी का नवाब घोड़ा बिना दाने-चारे के मर जायगा। जाओ, अभी गाड़ी ले जाओ।

मालिक का मतलब न समझ सकने से कोचवान डर के मारे सलाम करके चला गया।

रसिक चक्रवर्ती बहुत पुराना नौकर है। इस घर के सभी लोग उसकी इज्जत करते हैं। उसने कहा—छोटे बाबू आवेंगे तो किराये की गाड़ी से भी आ जायँगे। आप इस ज़रा सी बात की क्यों फ़िक्र करते हैं?

गोकुल ने देखा नहीं था कि रसिक पास ही है। इसी से हड़-बड़ाकर कहा—भला उस अभागे की मैं क्यों फ़िक्र करने लगा! चक्रवर्तीजी, कहते क्या हो? यदि औरतें घर में इस तरह दिन-रात न रोतीं-पीटतीं तो मैं उसे घर में पैर तक न रखने देता। गोकुल मजूमदार जब नाराज़ होता है तब फिर आगा-पीछा नहीं सोचता।

रसिक को सब भेद मालूम था। वह अच्छी तरह जानता था कि घर में औरतों ने विनोद के देखने को किसी दिन एक आँसू तक नहीं गिराया। किन्तु इसके लिए उसने बहस नहीं की।

धूम-धाम से बाप की तेरही (श्राद्ध) होगी। इसके लिए गोकुल काम में बहुत उलझा हुआ था। किन्तु कान उसके गाड़ी के पहियों की आहट लेने को खड़े थे। कोई दो घण्टे में उसने दूर पर भारी गाड़ी की आहट पाकर रसिक चक्रवर्ती को सुनाते हुए एक नौकर से कहा—जाकर देख तो सही, गाड़ी हमारी है या किसी और की। मैंने नाराज़ होकर उसको धमकाया था कि क्यों नाहक़ घोड़ों को दौड़ाकर हैरान कर रहा है। इससे नासमझों ने आव देखा न ताव—मेरी बात का ठीक मतलब न समझकर वे स्टेशन को फिर दौड़ गये! गुणी भाई के लिए बार-बार गाड़ी भेजनी होगी! सौतेली मां की नाराज़ी के डर से घोड़ों की जान नहीं ली जा सकती।

रसिक ने सुन लिया, किन्तु भला-बुरा कुछ कहा नहीं। थोड़ी देर में ख़ाली गाड़ी आकर गाड़ीख़ाने में खोल दी गई। नौकर ने आकर मालिक को यही ख़बर दी। रसिक सामने ही था। गोकुल ने उसकी ओर देखकर सूखी हँसी हँसते हुए कहा—तब तो मैं मारे दुःख के मर गया। जा, जा, घर में मालकिन को उनके पासशुदा लड़के की तारीफ़ सुना आ! कल-परसों आने पर यदि उसे फाटक के भीतर पैर रखने दूँ तो तुम लोग कहना—हाँ। गोकुल मजूमदार ऐसा आदमी नहीं। जब एक बार नाराज़ हो गया हूँ तब यदि स्वयं ब्रह्मा-विष्णु-महेश आकर उसकी सिफ़ारिश करें तो भी न सुनूँगा। अभी से कहे देता हूँ। चक्रवर्तीजी, तुम जाकर मा से कह आओ; पृथिवी उलट जाने

पर भी गोकुल मजूमदार की बात में अन्तर नहीं पड़ सकता। वक्त पर आ जाता तो उसे कुछ दे भी दिया जाता; अब तो कौड़ी भी मिलने की नहीं। मिलना-जुलना तो दूर की बात है, घर में पैर तक न रखने पावेगा।

वह फुर्त्ती से भीतर चला गया।

किसी के ऊपर क्रोध करके गोकुल ठीक समय से पहले ही आकर, दिया जलने के बाद ही, बिस्तर पर लेट रहा। घर में औरतों को कुछ ख़बर न थी कि मामला क्या है। उसने नौकरनी को धमकाकर लौटा दिया, दूध पीने नहीं गया। अध्यापक पण्डितों में किसको क्या भेंट दी जाय, इसकी फ़ेहरिस्त बनाने के लिए दूकान के गुमाश्ता से कहा गया था। उसने कमरे के भीतर आकर कोई बात पूछी थी कि गोकुल ने तुरन्त उठकर काग़ज़ को नोचकर फेंक दिया और कहा—बाबूजी दस-पाँच इलाक़े नहीं छोड़ गये हैं कि राजा लोगों की तरह पण्डितों को दान-दक्षिणा दी जाय! जाओ जी, यह अमीरी चाल मुझसे सँभलने की नहीं।

गुमाश्ता बहुत ही लज्जित और उदास होकर चला गया।

भवानी को जब यह मालूम हुआ तब वे कमरे के बाहर चौखट के पास आकर बैठ गईं। उन्होंने स्नेह से मुलायमियत के साथ पूछा—गोकुल, क्या तेरी तबीअत ठीक नहीं है?

गोकुल ने लेटे-लेटे ही उत्तर दिया—अच्छी है।

भवानी ने कहा—तो फिर तूने कुछ खाया क्यों नहीं? एकाएक अभी से आकर लेट क्यों रहा?

"योंही लेट गया हूँ।"

भवानी ने तनिक ठहरकर दुबारा पूछा—पण्डितों को दक्षिणा देने की फ़ेहरिस्त तूने फाड़कर क्यों फेंक दी ? कल सवेरे यदि निमन्त्रण-पत्र न रवाना किये जायँगे तो कुछ न होगा; वे वक़्त पर न पहुँचेंगे।

गोकुल ने लेटे-लेटे ही जवाब दिया—न पहुँचेंगे तो न सही।

भवानी ने कुछ तो चकराकर और कुछ चिढ़कर कहा—छिः गोकुल, इस समय इस तरह अधीर होने से काम न चलेगा। क्या बात हुई है, मुझे साफ़ साफ़ बतला। मैं सब सँभाल लूँगी।

अब गोकुल अपने कम्बल के बिछौने पर, आँखें निकालकर, उठ बैठा। उसने किसी दिन यह नहीं सीखा कि किसके साथ किस ढङ्ग से बात-चीत करनी चाहिए। उसने कड़ी आवाज़ में उत्तर दिया—मा, जो तुम्हारी बात माने वह गदहा। बाबूजी तुम्हारी बात मानते थे सो क्या मैं भी मानूँगा ? मैं तो दस ब्राह्मणों को भोजन कराकर शुद्ध हो जाऊँगा—मैं किसी तरह की धूम-धाम करने का नहीं।

अब वह तुरन्त दीवार की ओर मुँह करके लेट रहा।

भवानी ने बड़ी शान्ति से कहा—छिः बेटा, वे तो स्वर्गवासी हो गये; उनके सम्बन्ध में भला ऐसी बात कहनी चाहिए !

गोकुल ने कुछ उत्तर नहीं दिया। भवानी ने तनिक चुप रहकर फिर कहा—बेटा, ऐसा करोगे तो लोग क्या कहेंगे ! जिनकी

जैसी हैसियत होती है, उसी के लिहाज़ से उन्हें काम करना पड़ता है; उसमें कमी करने से बदनामी होती है।

गोकुल ने उसी तरह लेटे रहकर उत्तर दिया—किया न करें साले बदनामी। मुझे किसी की परवा नहीं। मैं किसी का क़र्ज़दार थोड़े हूँ जो डरूँ।

भवानी ने कहा—किन्तु इससे उनकी तृप्ति क्योंकर होगी? वे जो इतनी धन-दौलत छोड़ गये हैं सो उनकी हैसियत के माफ़िक़ काम न किया जायगा तो उन्हें सन्तोष न होगा।

भवानी ने समझ-बूझकर ही गोकुल के मर्मस्थान में चोट पहुँचाई थी। वे जानती थीं कि गोकुल अपने बाप को कैसा क्या चाहता है।

वह उठकर बैठ गया और भरे हुए गले से बोला—मा, ख़र्च की बात कहता कौन है? तुम्हारी तबीअत में आवे उतना ख़र्च करो; किन्तु ज्यों-ज्यों दिन बीतते जाते हैं, मेरे हाथ-पैर बेकाम से होते जाते हैं। विनोद अभिमान से रूठ गया है। मा, मैं अकेला क्या-क्या करूँ?

अब गोकुल एकाएक उच्छ्‌वसित होकर रोने लगा। भवानी ख़ुद भी सँभल न सकीं। रोने लगीं। तनिक चुप रहकर अन्त में आँचल से आँखें पोंछकर अश्रु-जड़ित स्वर में पूछा—गोकुल, उसे यह ख़बर मिल भी गई है?

गोकुल ने उसी दम कहा—ज़रूर।

"उसे किसने ख़बर दी?"

गोकुल को मालूम न था कि पिता की मृत्यु की सूचना विनोद को किसने दी है। मास्टर साहब के बेटे हारान के सम्बन्ध में गोकुल को स्वयं शक हो गया था। फिर भी न जाने कैसे वह भली भाँति समझ बैठा था कि विनोद सब कुछ सुन-समझकर ही सिर्फ़ लाज और ऐंठ के मारे घर नहीं आ रहा है। उसने मा के मुँह की ओर देखकर कहा—ख़बर उसे मिल गई है मा! बाबूजी हमें हमेशा के लिए छोड़कर चले गये हैं—यह क्या उसे मालूम नहीं हुआ? जैसी मेरी छाती के भीतर शोक की आग जल रही है, हाय-हाय मची हुई है, ऐसा क्या उसे नहीं हो रहा है? मा, उसे सब मालूम हो गया है—सब मालूम हो गया है।

मा ने तनिक चुप रहकर अन्त में जब बात कही तब गोकुल ने अचरज के साथ देखा कि अब उनका वह अश्रु-सिक्त गद्गद कण्ठस्वर नहीं है। किन्तु उसमें उत्ताप की मात्रा भी न थी। उन्होंने स्वाभाविक स्वर में कहा—बेटा गोकुल, यदि यही सच है तो तू ऐसे भाई के लिए अब पछतावा मतकर। समझ ले कि हमारे वंश में और बच्चे थे ही नहीं। जो मरे बाप-मा का क्रिया-कर्म करने तक को क्रोध के मारे घर नहीं आता उसके साथ अब हमारा कुछ भी वास्ता नहीं।

गोकुल भला इस अभियोग का क्या जवाब देता? इससे चुप हो रहा। किन्तु जवाब दिया उसकी स्त्री ने। वह दरवाज़े की ओट में बैठी सब बातें सुन रही थी। उसने वहीं से साफ़ गले से उत्तर दिया—बाबूजी क्या बिना ही समझे-बूझे यह

लिखा-पढ़ी कर गये हैं? असल में वे अन्तर्यामी थे। जब लगातार तीन-चार दिन तक कलकत्ते में देवरजी का, ढूँढ़ने पर भी, कुछ पता न लगा तभी उनके सारे गुण बाबूजी को मालूम हो गये। वे यदि अपनी सारी जायदाद दे गये हैं तो इसके लिए हम लोगों को तो कोई दोष न दे सकेगा। तुम कितना ही भाई-भाई क्यों न कहा करो,—और कोई होता तो—

बात की झोंक अधूरी ही रह गई। और कोई होता तो क्या करता, उसका खुलासा करना इस स्थान पर बड़ी बहू ने आवश्यक नहीं समझा। किन्तु भवानी को मन में बड़ा अचम्भा हुआ। क्योंकि इससे पहले अपने ससुर की जीवितावस्था में किसी दिन बड़ी बहू ने इस ढंग से बात-चीत नहीं की थी; यहाँ तक कि सास के आगे स्वामी को लक्ष्य करके वह बात-चीत न करती थी। इधर दस-पाँच दिन के ही भीतर उसकी इतनी अधिक उन्नति देखकर भवानी चकरा गईं।

गोकुल को भी पहले कुछ सूझ नहीं पड़ा। किन्तु तुरन्त ही खुले हुए दरवाजे की ओर दाहना हाथ फैलाकर, भवानी के मुँह की ओर देखकर, वह बिलकुल पागल की तरह चिल्ला उठा—सुन लो मा, सुन लो। छोटे आदमी की लड़की की बात सुन लो।

बड़ी बहू ने चिल्लाकर तो नहीं किन्तु और भी ज़ोर देकर स्वामी को उद्देश करके कहा—देखो, जो कहना हो मुझको कह लो; नाहक़ बाप-दादा तक मत जाओ—मेरा बाप और तुम्हारा एक ही चीज़ है।

जवाब देने के लिए गोकुल के होंठ काँपने लगे, किन्तु मुँह से कोई बात नहीं निकली। परन्तु उसकी आँखों से मानो आग की चिनगारी झड़ने लगी।

भवानी अब तक चुप बैठी थीं। अब उन्होंने हलकी सी लानत के स्वर में कहा—बहू, भला तुम्हें बीच में पड़ने की क्या जरूरत! जाओ, अपना काम देखो।

मा, मैं तो किसी दिन बीच में नहीं पड़ती—बातचीत नहीं करती। नौकरानी की तरह काम करने आई हूँ सो दिन-रात करते-करते मरी जाती हूँ। किन्तु उन्हें तो देखो, खाते-पीते-सोते—जब देखो तब यह कहकर उछला करते हैं कि मेरा भाई यह पास है मेरा भाई वह पास है; और भाई का यह हाल है कि किसी दिन घर आकर इन्हें मूर्ख समझने के कारण सीधे मुँह बात तक नहीं करता! उन्हें जो लाज-शरम कुछ हो तो भला मुझे बोलने की क्या जरूरत?

बस, यह कहकर बड़ी बहू उसी दम धम-धम करके पैरों की आवाज़ के द्वारा अपनी दशा का ज्ञान कराती वहाँ से चली गई। उसकी बात-चीत सुनकर आज इतने दिनों के बाद भवानी हक्का-बक्का सी रह गईं। अब तक उन्होंने अपनी बहू को पहचाना नहीं था। अब पहचान होते ही उनके दुःख, क्षोभ और शङ्का का ठौर-ठिकाना न रहा।

किन्तु बड़ी बहू वहाँ से एकदम चली नहीं गई थी। वह बरामदे के एक ओर से,—इस ढंग से जिससे कि किसी के सुनने

में तिल भर भी असुविधा न हो,—फिर बोली—जब देखो तब मुट्ठी भर-भरकर रुपया लेते वक्त ही बड़े भाई हैं। मैं अपने मामा लोगों को भी दो-चार परीक्षाएँ पास करके निकलते देखती हूँ। किन्तु उस समय तनिक सावधान रहने को कहती थी तब तो बहुत ही बुरा लगता था। सो भला लगे चाहे बुरा, अपना रुपया बुरी तरह लुटते देखकर मैं अब हमेशा के लिए मुँह नहीं बाँधे रह सकती। मेरे भी तो लड़के-बच्चे हैं। मूर्ख बड़ा भाई मिल गया है सो जितना बना, ठग लिया। ठगावे न, मेरा क्या बिगड़ता है? उसके कच्चे-बच्चे मारे-मारे फिरेंगे।

अब वह सचमुच वहाँ से चली गई।

गोकुल हाथ-पैर पटककर क्रोध के मारे खड़ा हो गया। अनुपस्थित स्त्री को लक्ष्य करके वह गरजने लगा।

"मैं मूर्ख हूँ! कौन साला मुझे मूर्ख कहता है? तो यह सब माल-असबाब, धन-दौलत कहाँ से आई! रोज़गार मैंने किया कि विनोदा ने? विनोदा के बाप की भी मजाल नहीं कि मेरी आँखों में धूल झोंककर मुझसे रुपया वसूल कर ले जाय। मैं बड़ा हूँ, वह छोटा है। उसने चार परीक्षाएँ पास कर ली हैं तो मैं दस पास कर सकता हूँ; यह समझ ले! भला मैं मूर्ख हूँ? घर में पैर रक्खेगा तो मैं दरबान से गरदनियाँ दिलाकर निकलवा दूँगा। देखता हूँ, कौन उसे घर में आने देता है?"

इस प्रकार वह बे-सिर-पैर का निरर्थक लगातार न जाने क्या क्या बकता-झकता रहा। भवानी ने एक बात तक नहीं की।

देर तक चुपचाप पत्थर की पुतली की तरह बैठी रहीं और फिर धीरे से उठकर वहाँ से चल दीं।

[६]

उस समय झगड़ा हो गया था सही, किन्तु अगले दिन गोकुल का बर्ताव देखने से स्पष्ट हो गया कि पिछली रात को ही उसका मनोरमा से समझौता हो गया है। अकस्मात् सबेरे से ही वह काम-काज में लग गया और नौकरों से कहने लगा कि यह करो, वह करो। वह घर के प्रत्येक व्यक्ति को बार-बार याद दिलाता हुआ घर में चक्कर लगाने लगा कि तेरहीं के दिन को अब सिर्फ़ तीन दिन रह गये हैं।

यदि आज कोई बाहरी आदमी विनोद की चर्चा छेड़ता तो गोकुल कान मूँदकर कह देता—मेरे बाबूजी मरते समय जिसे त्याज्य पुत्र बना गये हैं उसका ज़िक्र मुझसे कोई न करे। हमारे साथ अब उसका कोई सरोकार नहीं। मेरा भाई तो मर गया।

गोकुल की बात-चीत सुनकर किसी ने आँख से दूसरे को इशारा किया तो दूसरे ने छिपकर गर्दन हिलाकर अपने मन का भाव प्रकट किया। अर्थात् यह सीधी सी बात किसी से छिपी नहीं रही कि विनोद एकदम दूध की मक्खी हो गया है और किसी ढंग से क्यों न हो, गोकुल पूरे सोलह आने का मालिक बन बैठा है। अब गुप्त रूप से कितने ही लोग विनोद के प्रति सहानुभूति प्रकट करने लगे। कोई-कोई तो यहाँ तक कृपा कर

देने का आभास देने लगे कि यदि विनोद आकर इस साज़िश के विरुद्ध अदालत का दरवाज़ा खटखटावे तो हम लोग उसे सहायता देने से न चूकेंगे। समझदार जयलाल बनर्जी तो खुलकर कहने लगे कि मनुष्य पहचाना नहीं जा सकता, इसका जीता-जागता उदाहरण यही गोकुल मजूमदार है। सिर्फ़ जयलाल की ही आँखों में गोकुल धूल नहीं झोंक सका। क्योंकि जिस समय टोले-महल्ले के बूढ़े-बालक, स्त्री-पुरुष सभी ने गोकुल को बड़ा न्याय-निष्ठ, भ्रातृवत्सल, धर्मराज युधिष्ठिर कहकर आकाश को विदीर्ण किया है उस समय एक जयलाल ही चुपचाप मुसकुराया किये हैं, और मन में कहते रहे हैं—सौतेली मा के बेटे, सौतेले भाई पर इतना खिंचाव! वेद और पुराण में जो बात कभी किसी समय हुई ही नहीं वह क्या इस घोर कलिकाल में होगी! अतएव इतने दिनों तक वे मुँह बन्द किये तमाशा देख रहे थे। किसी से उन्होंने कोई बात नहीं कही। ज़रूरत क्या थी! उन्हें बख़ूबी मालूम था कि एक न एक दिन भाँड़ा फूटेगा ही।

"अब देख लो तुम्हीं लोग—इस इतने भले, भोले-भाले गोकुला के सम्बन्ध में लगातार जो कुछ मैं सोचता आया हूँ वह ठीक निकला कि नहीं!"

किन्तु किसी को कुछ पता न था कि इतने दिन से जयलाल क्या सोचते आ रहे हैं, इसलिए अब सब लोगों को चुपचाप उनकी समझदारी की दाद देनी पड़ी; और बात की बात में फूस की आग की भाँति वह बात—लोगों के मुँह से—बस्ती भर में

फैल गई। मज़ा यह कि गोकुल को पता ही न था कि बस्ती में उसके विरुद्ध इतने ज़ोरों से ताबड़तोड़ आन्दोलन हो रहा है।

भवानी सदा से बात-चीत कम किया करती थीं। उस पर कल रात से दुःख के बोझ के मारे उनका हृदय एकदम सुन्न हो रहा था। गोकुल की स्त्री मनोरमा ने, घात पाकर, स्वामी को एकान्त में बुलाकर इस ओर ध्यान दिलाते हुए कहा—मा का रंग-ढंग देख रहे हो न?

गोकुल ने उद्विग्न होकर कहा—नहीं तो। मा को क्या हुआ है?

मनोरमा ने मुँह बनाकर कहा—होगा क्या? कल जो मैंने वह देवर के रुपये बर्बाद करने की चर्चा छेड़ दी थी, तभी से उन्होंने मुझसे बात-चीत नहीं की। तुमसे तो बोलती हैं न?

गोकुल ने रुखाई से कहा—नहीं, मुझसे भी नहीं बोलतीं।

मनोरमा ने तनिक गर्दन हिलाकर और भी धीमे स्वर में कहा—देख लिया मज़ा! देवर ने जो रुपये अन्धाधुन्ध फ़िज़ूल ख़र्च कर दिये हैं वे रहते तो हमीं लोगों के न होते। बाबूजी तो सब हमीं लोगों के नाम लिख-पढ़ गये हैं। वे हमारा सत्यानाश करते रहें—और उस बात की तनिक चर्चा करते ही मा नाराज़ होकर बोल-चाल बन्द कर देंगी; यही दुनिया का दस्तूर है? मा मा कहते तो तुम्हारा मुँह सूखता है; भला तुम्हीं कहो, सच है या झूठ?

गोकुल का चेहरा एकदम स्याह हो गया। उसे ढूँढ़ने पर भी कुछ जवाब न मिला। शायद मनोरमा ने यही भाँपकर

कहा—देवर कुछ भी किया करें, कुछ भी हो, हैं तो पेट के लड़के। और तुम ठहरे सौत के बेटे। सो तुम्हें मिल गई है सारी की सारी मिलकियत—भला यह बात किस औरत को भली लगेगी? नहीं जी, नहीं, मेरी सब बातें इस तरह उड़ा देने से अब नहीं चलने का। अब तुमको तनिक समझ-बूझकर चलना होगा। इस तरह माजी माजी कहकर यदि नम्र बने रहोगे तो सब गुड़ गोबर हो जायगा, यह मैं कहे देती हूँ। जायदाद बड़ी बुरी चीज़ है।

गोकुल के हृदय के भीतरी भाग में अभूतपूर्व शङ्का के मारे उथल-पुथल सी होने लगी। बेचारे का चेहरा उतर गया। टुकुर-टुकुर देखता रह गया।

मनोरमा ने कहा—हम ठहरीं औरत-जात। हम स्त्रियों के मन की बात को जितना भाँप लेती हैं उतना तुम मर्द-बच्चे नहीं समझ सकते। मेरी बात मानो।

उसने स्वामी के चेहरे पर नज़र जमाकर ताड़ लिया कि मेरी बात कुछ-कुछ कारगर हो गई, अतएव अब दावे के साथ बोली—और देवर तो कुछ ज़िन्दगी भर यों आवारा घूमते ही न रहेंगे। तुमने उनके लिखाने-पढ़ाने में कुछ कसर नहीं रख छोड़ी है। कुछ भी हो, अब उन्हें शादी-ब्याह करके कहीं नौकरी-चाकरी करनी होगी और मा को ले जाकर अपनी गिरिस्ती जमानी होगी। वे अपनी मा को सचमुच सदा हमारे घर पड़ी न रहने देंगे! इसके सिवा अपने लिए एक छोटा-मोटा

झोंपड़ा तो उनको दरकार होगा ही। सो हम भी अपनी हैसियत के हिसाब से सहारा ज़रूर देंगे, जिसमें कोई कह न सके कि अमुक मजूमदार ने अपने सौतेले भाई की रत्ती भर परवा नहीं की। सौतेले भाई से भला वास्ता ही क्या—यह बात जिसे कहनी हो कहा करे, हम भला ऐसी बात कह सकते हैं। यह हमारे ख़ानदान की रीति नहीं।

बस, यह पट्टी पढ़ाकर मनोरमा, स्वामी को सोचने-विचारने के लिए समय देकर, किसी काम से चली गई। सपना देख रहे व्यक्ति की भाँति गोकुल शून्य दृष्टि से देखता वहीं बैठा न जाने कैसे-कैसे विचित्र स्वप्न देखने लगा। सब बातों को नीचे दबाकर एक यही बात उसके कानों में लगातार गूँजने लगी—जायदाद बड़ी बुरी चीज़ है। और सिर्फ़ उसी जायदाद के लिए मा मानो नाराज़ होकर, उसे छोड़कर, विनोद के पास हमेशा के लिए जा रही हैं। गोकुल को याद आया, मनोरमा ने झूठ नहीं कहा है। आज दिन भर में मा से उसकी एक बार बात-चीत तक नहीं हुई। काम-काज के लिए वह उनके आगे होकर दो-तीन बार निकला है; फिर भी उन्होंने नज़र से उसकी ओर देखा तक नहीं।

मा बात-चीत कम किया करती हैं, यह बात गोकुल जानता था। इसी से उस समय उसके मन में तनिक खटका तक नहीं हुआ किन्तु अब वह सारे मामले को पानी की तरह साफ़ देखने लगा। और मज़ा यह कि इस गुपचुप सन्नाटे की विरुद्धता

को सह लेना उसके लिए बिलकुल असम्भव है। वह चटपट उठकर मा से रूबरू झगड़ा करने के लिए उनकी कोठरी की ओर गया।

गोकुल ने कोठरी में पैर रखते ही कहा—इस तरह मुँह फुलाकर काम-काज के घर में बैठें रहने से तो काम न होगा मा।

भवानी ने अकचकाकर ज्योंही गोकुल की ओर नज़र की, त्योंही वह बोला—तुम्हारी पतोहू ने तो कुछ झूठ नहीं कहा कि विनोद मुट्ठी भर-भरकर रुपया बर्बाद कर रहा है! बाबूजी अपनी जायदाद हमको दे गये हैं तो भला इसमें हमारा क्या अपराध है? तुम जाकर उनसे समझौता करो—हम पर ग़ुस्सा न करने पाओगी, यह मैं कहे देता हूँ।

भवानी ने मर्माहत होकर धीरे-धीरे कहा—गोकुल, मैं तो किसी पर ग़ुस्सा नहीं करती—किसी से समझौता भी मुझे नहीं करना है।

"नहीं चाहती हो तो उस तरह रहने से न चलेगा। विनोद से कहो, कहीं नौकरी-चाकरी कर ले। मेरे घर में उसका गुज़ारा न होगा।"

"सो तो होगा ही नहीं गोकुल—यह कुछ बड़ी बात नहीं है।" कहकर भवानी ने नीची गर्दन कर ली।

झगड़ा न हो सका। अतएव उपायहीन क्रोध के मारे अस्पष्ट स्वर में बकता-झकता हुआ गोकुल चला गया। स्त्री को बुलाकर बोला—आज मा से मैंने साफ़-साफ़ कह दिया—'यहाँ

विनोद का गुज़ारा न होगा। नौकरी-चाकरी जो करना चाहे, कर ले। मैं कुछ नहीं जानता।'

मनोरमा की .खुशी का ठिकाना न रहा। उसने पास आकर बहुत ही धीमे स्वर में पूछा—उन्होंने क्या कहा ?

गोकुल ने अस्वाभाविक उत्तेजना के साथ उत्तर दिया—कहेंगी क्या ! मैं कहने-सुनने की परवा कब करता हूँ।

बड़ी बहू ने आँखें गड़ाकर कहा—फिर भी ?

गोकुल ने उसी तरह करके उत्तर दिया—फिर भी क्या ! उन्हें मान लेना पड़ा कि हाँ, इस घर में विनोद का गुज़ारा नहीं होने का।

मनोरमा ने और भी स्वर को उतारकर कहा—यह सोलहों आने नाराज़ हो जाने की बात है, समझ गये न ? मा का जी लगा है सगे लड़के की फ़िक्र में—और तुम हो रहे हो उनकी आँखों की किरकिरी।

गोकुल ने सिर हिलाकर कहा—क्या मैं यह समझता नहीं ? भला मुझसे कोई पेश पा सकता है ! मैं सारी चालों को ताड़ता हूँ।

उसने बाहर निकलते ही सामने रसिक चक्रवर्ती को पाकर कहा—अजी चक्रवर्तीजी, तुमने एक नई ख़बर सुनी है ? अब तक तो मैं घर-गिरिस्ती का और दूकान का सब काम-काज सँभालता रहा सो किसी ने कुछ न कहा, लेकिन अब मा की आँखों में खटकने लगा हूँ। अब तो वे मुझसे बोलती तक नहीं, सामने पहुँच जाता हूँ तो मुँह फेर लेती हैं।

चक्रवर्ती ने स्वाभाविक अचरज करके कहा—नहीं बाबू, कहते क्या हो ?

"कहूँ क्या ?—ओ हरि की माई, सुन तो सही ।"

घर की बुढ़िया नौकरानी किसी काम से बाहर जा रही थी। मालिक के पुकारते ही पास आ गई। गोकुल ने तुरन्त चक्रवर्ती की ओर देखकर कहा—पूछ न लो। बतला हरि की माई, भला मा को मेरे साथ बात-चीत करते देखा है ? सामने पड़ जाता हूँ तो मुँह फेर लेती हैं न ?

हरि की मा को कुछ भेद मालूम न था। बौरहे की तरह दम भर देखते रहकर अन्त में तनिक गर्दन हिलाकर वह, मालिक का मन रखकर, अपने काम से चली गई।

"सच-झूठ सुन लिया न ?" कहकर और चक्रवर्ती की ओर तनिक इशारा करके गोकुल दूसरी ओर चला गया।

उस दिन टोले-महल्ले का जो कोई मिलने-जुलने को आया उसी से गोकुल सौतेली मा की शिकायत करके बार-बार यही रटता हुआ घूमने लगा—मैं तो उनकी सौत का बेटा हूँ न ! इसी से उधर बाप की आँखें मुँदीं और इधर मैं इनकी आँखों में गड़ने लगा।

दिया-बत्ती के बाद गोकुल भीतर घर में आकर भवानी को लक्ष्य करके बोला—मेरी ग़रज़ नहीं पड़ी है कि बर्दवान से छोटी बुआ के बुलाने को आदमी भेजूँ—कुछ ज़रूरत नहीं। आना होगा तो वे अपने आप आ जायँगी।

भवानी ने मुँह ऊपर करके नर्मी से कहा—यह क्या अच्छा होगा गोकुल ?

गोकुल ने कड़ककर उत्तर दिया—मैं भला-बुरा नहीं जानता। दोनों हाथों रुपये उड़ाने की मेरी हैसियत नहीं है। मैं कहे देता हूँ कि इसके लिए मुझसे ज़िद मत करो।

इन सबके बुलवाने की आज्ञा कल स्वयं भवानी ने गोकुल को दी थी। इस समय उन्होंने कुछ न कहा। जो काम कर रही थीं वही चुपचाप करने लगीं।

"बुलवा लो कहने से ही तो बुला नहीं सकता मा। नाहक़ क़र्ज़ करके मैं डूबना नहीं चाहता।"

भवानी ने अस्फुट स्वर में कहा—अच्छी बात है गोकुल। ठीक नहीं समझते तो मत भेजो उन्हें बुलाने को आदमी।

गोकुल यह कहता-कहता चला गया—अब तो मुझे सोचना-समझना होगा ही! मेरी सगी मा थोड़े बैठी है! मैं मर ही जाऊँ तो किसका क्या बिगड़ता है। मेरा अब कौन बैठा है। अब तो मुझे स्वयं सँभलकर चलना है। समझ-बूझकर रुपया-पैसा ख़र्च करना होगा! सगी मा जो नहीं हैं।

रुपये-पैसे और जायदाद पर एकाएक गोकुल की यह जबर्दस्त आसक्ति देखकर भवानी ने चुपचाप ठण्ढी साँस ली। किन्तु गोकुल तुरन्त ही लौट आया और बोला—मैं क्या समझता नहीं हूँ ? क्या यह तुमने ख़फ़ा होकर नहीं कहा है ? कल तो तुम्हीं ने कहा था कि 'गोकुल, अपनी बुआ वग़ैरह के बुला लाने को

आदमी भेज दे' और आज कहती हो कि जो ठीक समझो, करो ! मेरे बाप नहीं है, भाई नहीं है, इसी से इस तरह छकाती हो ! लोग समझेंगे कि गोकुल सचमुच अपनी मा की बात नहीं मानता।

गोकुल ने जो यह समझ से बाहर की तोहमत लगाई है उससे भवानी विमूढ़ हतबुद्धि की तरह पल भर उसकी ओर ताकती रहकर बोलीं—गोकुल, मैं तुम लोगों के प्रपंच से अलग हूँ—बेटा, मैं तो कुछ कहती ही नहीं।

अकस्मात् गोकुल की आँखों में आँसू भर आये। उसने कहा—भला बताओ तो मा, मैंने तुम्हारा कौन सा हुक्म नहीं माना है जो तुम मुझसे ऐसी बात कहती हो ? मैं कहे देता हूँ कि अच्छा न होगा। लाज और घिन के मारे विनोद ने घर छोड़ दिया—जहाँ मेरा सींग समायगा, मैं भी चला जाऊँगा, तुम अपनी धन-दौलत लिये बैठी रहो।

आँखें पोंछता हुआ गोकुल फुर्ती से बाहर चला गया।

[७]

गोकुल की बड़ी बेटी हेमाङ्गिनी अपनी दादी के बिछौने में सोया करती थी। वह दिन निकलते ही ज़ोर-ज़ोर से कहती दौड़ी आई—काका आ गया अम्मा, काका आ गया।

पास की ही कोठरी में गोकुल सो रहा था। वह तुरन्त ही हड़बड़ाकर कम्बल के बिस्तरे पर उठकर बैठ गया। उसने

सुना, मनोरमा आनन्दरहित अचरज के साथ पूछ रही है—कब आ गया तेरा काका ?

"बहुत रात गये।"

"इस समय क्या कर रहा है ?"

"अभी तो जागे नहीं हैं। वे अपनी कोठरी में सो रहे हैं।"

मनोरमा ने फिर कोई बात नहीं पूछी। वह अपने काम से चली गई। गोकुल ने दरवाज़े से झाँककर, हाथ से इशारा करके, लड़की को पास बुला लिया और धीरे से पूछा—तेरी दादी ने उससे क्या कहा री हिमू ?

हिमू ने गर्दन हिलाकर कहा—मालूम नहीं बाबू।

फिर भी गोकुल ने पूछा—तो क्या ख़ूब बका-झका ?

हिमू ने अनिश्चित भाव से कोई दो बार सिर हिलाकर अन्त में न जाने क्या समझकर कह दिया—हूँ !

गोकुल ने उकताकर उसका एक हाथ पकड़ लिया और सीधा कोठरी में ले जाकर पूछा—बतला तो हिमू, तेरी दादी ने क्या-क्या कहा ?

हिमू बड़ी मुश्किल में पड़ गई। जिस समय काका आये, वह बेख़बर पड़ी सो रही थी। उसे कुछ ख़बर ही नहीं। इसलिए उत्तर दिया—बाबू, मुझे कुछ मालूम नहीं।

गोकुल को विश्वास नहीं हुआ। उसने अप्रसन्न होकर कहा—अभी तो कहा है, जानती हूँ। मा ने रोक दिया है, क्यों ? बतला, बतला, मैं किसी से कहूँगा नहीं।

जिरह के मारे हिमू आँखें फाड़कर देखती रह गई। गोकुल ने उसके माथे और मुँह पर हाथ फेरकर उत्साह देते हुए कहा—बतला तो बेटी, क्या-क्या बातचीत हुई ? तो क्या मा ने कहा कि घर से निकल जा ? ये दो रुपये ले—खिलौने ले लेना।

गोकुल ने तकिये के नीचे से रुपये निकालकर ज़बर्दस्ती लड़की की मुट्ठी में रख दिये।

हिमू ने रुखाई के साथ कहा—हाँ, कहा था।

"इसके बाद ? फिर ?"

रोआसी होकर हिमू बोली–इसके आगे मैं कुछ नहीं जानती।

गोकुल ने फिर उसके माथे पर मुँह पर हाथ फेरकर कहा—जानती है, ख़ूब जानती है। तेरे काका ने क्या कहा ?

"कुछ नहीं।"

गोकुल को विश्वास न हुआ। उसने चिढ़कर कड़ाई के साथ पूछा—बिलकुल कुछ नहीं कहा ? कहीं यह हो सकता है ?

पिता का रोष-पूर्ण कण्ठस्वर सुनकर हिमू ने एक तरह से रोकर कहा—नहीं जानती बाबू।

"फिर वही बात—नहीं जानती बाबू। बड़ी दुष्ट लड़की है !" कहकर उसने चट से हिमू के गाल में चपत जमाकर ठेलते हुए कहा—चल, हट यहाँ से।

लड़की रोते-रोते चली गई।

गोकुल फुर्ती से नीचे उतर आया और अपनी विमाता के कमरे में जाते ही बोला—सो अच्छा ही किया। घर में उसके

पैर रखते ही तरह-तरह से ख़ूब लगाया बुझाया है—यह सब इसी लिए न, जिसमें उसका जी मुझसे उचट जाय ? मुझसे कुछ छिपा नहीं रहा। किन्तु अपने बेटे को भी सावधान कर देना—मेरे सामने न आवे; मैं पहले ही कहे देता हूँ।

गोकुल जिस तरह आया था उसी तरह फ़ुर्ती से चला गया। कुछ भी समझ में न आने से भवानी विस्मित होकर देखती ही रह गईं। बाहर बहुत से आदमी तरह-तरह का काम कर रहे थे। गोकुल ने तनिक इधर-उधर फिरकर हरि की माई को बुलाकर कहा—हरि की अम्मा, तूने सुना है, भाई साहब आ गये हैं ?

नौकरनी ने सिर हिलाकर कहा—हाँ बाबू, बहुत रात गये छोटे बाबू आये थे।

गोकुल—सो तो जानता हूँ। फिर मा-बेटे के बीच क्या-क्या बात-चीत हुई ? मेरे नाम मा ने ख़ूब लगाया बुझाया होगा। घर से निकल जाने वग़ैरह की—

नौकरनी ने रोककर कहा—नहीं बड़े बाबू, माजी तो रात को उठीं ही नहीं। जदू जब उनका बैग उठा लाया तब मैंने जाकर छोटे बाबू का कमरा खोल दिया और दिया जलाकर रख दिया। बस, तब से वे फिर बाहर आये ही नहीं।

गोकुल ने विश्वास न करके कहा—क्यों नाहक़ छिपाती है ? मैं तो सब सुन चुका हूँ।

गोकुल की बात सुनकर नौकरनी अकचकाकर पल भर देखती रह गई। फिर बेटे की सौगन्द खाकर बोली—बड़े बाबू, ऐसी बात मत कहो। मैंने ही छोटे बाबू का सारा काम-काज कर दिया था—उन्होंने मा को बुलाने की मनाही करके कहा था—"हरि की माई, मुझे अब कुछ न चाहिए। तू सिर्फ दिया जला दे और जाकर आराम कर।" बेचारे की आँखें घुस गई हैं, मुँह उतर गया है। पहचाना ही नहीं जाता।

गोकुल की आँखें डबडबा आईं। कहने लगा—सो तो होगा ही! हरि की मा, तू कहती क्या है, बाबूजी गुज़र गये और इसे उनकी सूरत तक देखने को न मिली। इसे जायदाद से फूटी कौड़ी तक नहीं मिली—विनोद को जैसा लगता है सो उसी का मन जानता है। तुम सभी तो जानते हो कि वह बाबूजी को कितना चाहता था। क्या कहती है हरि की माई?

गोकुल की आँखों से आँसू झर पड़े। हरि की माई इस घर में बहुत दिन से काम करती है। गोकुल के आँसू देखकर उसकी भी आँखें गीली हो गईं। उसने भरे हुए गले से उत्तर दिया—बड़े बाबू, यह क्या कहने की बात है! वे तो मालिक को जी-जान से चाहते थे। हाँ, बहुत ज़ियादह लिखने-पढ़ने में लगे रहने से उनका सिर न जाने कैसा गरम हो उठा—उसी से—

गोकुल ने हरि की माई से बातों का सिलसिला जमा दिया। कहने लगा—ठीक तो है हरि की माई। माथा गरम न होगा?

उसने क्या कम विद्या पढ़ी है ? वह आनर ग्रेजुएट है। इधर हुगली, चूँचड़ा और बाबूगञ्ज में कितने आदमियों ने मेरे भाई की तरह विद्या पढ़ी है—गिना तो सही ? .खुद लाट साहब उसका हाथ थामकर उसे कुर्सी पर बिठलाते हैं—वह क्या मामूली आदमी है ! अगर तू कलकत्ते जाकर किसी भले आदमी से कहे कि 'मैं विनोद बाबू के घर की नौकरनी हूँ' तो देखना वह तुझे बुलाकर, पास बिठलाकर पचासों बातें पूछेगा ! यह सच समझ। लेकिन कहते न हैं कि गाँव के जोगी को भीख नहीं मिलती ! सो यहाँ भला किसी ने उसे पहचाना भी ? तूने देखा, उसका चेहरा बिलकुल उतर गया है ! क्यों न ?

नौकरनी ने सिर हिलाकर कहा—बड़े बाबू, उनका चेहरा देखते ही आँसू रोके नहीं रुकते।

गोकुल की आँखों से आँसू बहने लगे। चादर के खूँट से आँसू पोंछकर कहा—हरि की माई, तूने ही तो बचपन में उसकी टहल की है, उसे बड़ा किया है। एक तू ही उसे पहचान सकी है। उसकी जिन्दगी तो खेल-कूद और हँसी-.खुशी के बीच पढ़ने-लिखने में ही बीती है। भला उसको इन झमेलों में कब पड़ना पड़ा है ? और वसीअत में उसको हिस्सा नहीं दिया गया सो क्या मैं उसका हिस्सा छीन लूँगा ? जायदाद क्या उसके बाप की नहीं है ? देखें, कौन साला रोकता है ? उसने किया क्या है ? चोरी की है, डाका डाला है या .खून किया है ? किस साले ने देखा है ? बतलाओ, फिर उसे हिस्सा

क्यों न मिलेगा ? क्या क़ानून और अदालत कुछ नहीं हैं ? विनोद नालिश करेगा तो मुझे झख मारकर बाबूजी की आधी जायदाद कौड़ी-पाई से दे देनी होगी—यह समझ ले।

नौकरनी ने हामी भरकर कहा— हाँ बाबू, सो तो देनी होगी।

उत्साह से चेहरे को और आँखों को उद्दीप्त करके गोकुल ने कहा—तो यही कहो। और यह मा ! तू औरत जाति है सो उसी तरह रह। तूने भला क्यों वसीअत करने की सलाह दी ? क्या यह काम ऐसा हुआ जैसा मा को करना चाहिए था ? क्या धर्म नहीं है ? क्या भगवान् नहीं देखते हैं ? निर्दोषी को कष्ट दिया जायगा तो उनके यहाँ जवाब न देना पड़ेगा ? और जायदाद ! बेशुमार मिलकियत न है ! दो दिन के बाद ही जब वह हाईकोर्ट का जज हो जायगा—उस पद पर जाने से तो उसे कोई रोक न सकेगा—तब उसकी जायदाद को किस तरह रोक रक्खेगी ? आगा-पीछा सोचकर ही काम करना पड़ता है ! अब भलमनसी से, मान-सहित, हिस्सा न दिया जायगा तो अपमान सहकर देना होगा !

हरि की माई बहुत .खुश हुई। उसने विनोद का पालन किया था, वह वसीयत-फसीयत उसे अच्छी नहीं लगी। उसने कहा—अच्छा बड़े बाबू, तो तुम छोटे बाबू को बुलाकर कह क्यों नहीं देते कि 'भैया, अपना पूरा-पूरा हिस्सा तू सँभाल।' तुम जब हाथ से दे दोगे तब रोक-टोक करने की भला किसकी मजाल है ?

किन्तु गोकुल को असल खटका यहीं पर था। उसने दम भर टुकुर-टुकुर देखकर कहा—लेकिन सभी तो कहते हैं कि अब देने का रास्ता रुक गया है। हरि की माई, मैं बाबूजी के विल (वसीअतनामे) को रद नहीं कर सकता। तुम्हारी बड़ी बहू का ममेरा भाई नामी मुख़्तार है। उसने अपनी बहन को चिट्ठी न लिखी है—'ऐसा किया जायगा तो जेल काटना होगा।' हाँ, जो मा राज़ी हो जाय, उनकी बड़ी बहू रोक-टोक न करे, तो हो सकता है।

हरि की माई इसका ठीक उत्तर न दे सकने के कारण काम करने चली गई।

गोकुल ने मुँह फेरते ही देखा कि हिमू खेलने को जा रही है। उसे दुलार करके पास बुलाकर पूछा—तेरा काका उठ बैठा ?

हिमू ने टेढ़ी गर्दन करके कहा—हूँ—उठते ही अपने बैठके में चले गये। किसी से बातचीत नहीं की।

घर के एक छोर पर, लबे-सड़क, एक कमरे में विनोद की बैठक थी। अँगरेज़ी ढंग पर कमरे की सजावट थी। इसी कमरे में उसके यार-दोस्त मिलने-जुलने आते थे। पैरों की आहट बचा गोकुल ने जँगले में हो झाँककर देखा कि विनोद तख़्त पर नहीं, नीचे ज़मीन पर दूसरी ओर को मुँह किये चुपचाप बैठा है। उसके बैठने का यह ढंग देखते ही गोकुल की आँखें डबडबा आईं। छोटे भाई का मुँह देखने को वह पाँच

छः मिनट तक चुपचाप खड़ा रहकर अन्त में आँखें पोंछकर लौट आया।

चक्रवर्ती ने कहा—बड़े बाबू, अध्यापक पण्डितों की विदा की फ़ेहरिस्त—

गोकुल को मानो एकाएक अँधेरे में उजाले की रेखा देख पड़ी। उसने तुरन्त ही कहा—चक्रवर्ती जी, इन बातों में मुझे क्यों उलझाते हो! सरस्वती माता तो स्वयं आ गई हैं। विनोद से तो छिपा हुआ नहीं है कि कौन कैसा पण्डित है, और किसकी कैसी मान-मर्यादा है; उसी से पूछताछ कर ठीक क्यों नहीं कर लेते। मैं इसमें माथा न खपाऊँगा। वही जाने।

चक्रवर्ती ने कहा—किन्तु छोटे बाबू तो अभी तक जागे नहीं हैं।

गोकुल ने उदासी के साथ मुसकुराकर कहा—जागे नहीं हैं! भला उसे नींद-भूख है भी! हरि की माई को बुलाकर पूछ लो—उसने अपनी आँखों देखा है। वह कहती है—"बड़े बाबू, छोटे बाबू का चेहरा ऐसा हो गया है कि देखते ही बरबस आँसू उमड़ पड़ते हैं। फ़िक्र के मारे सोने जैसा रङ्ग मानो स्याह हो गया है।" अब विनोद के बैठके को इशारे से दिखाकर कहा—जाकर देख न लो, वह ठण्डी ज़मीन पर चुपचाप अकेला बैठा है। चक्रवर्तीजी, उसे देखने से भला किसकी छाती नहीं फटने लगती!

दुःखसूचक कोई एक अस्फुट बात कहकर चक्रवर्ती जाने को हुए कि गोकुल ने लौटाकर कहा—अच्छा, तुम तो सब कुछ जानते हो। इसी से पूछता हूँ कि मेरे रहते विनोद को इतना कष्ट क्यों दिया जाय? वह दुबला-पतला भला यह उपवास आदि का कष्ट कैसे सह सकेगा? कहीं बीमार न पड़ जाय। मेरा कहना है कि उसे खाने-पीने और सोने का जैसा अभ्यास हो वैसी ही उसके लिए व्यवस्था बनी रहे।

चक्रवर्ती ने निरुत्साह भाव से कहा—नियम तोड़ने से—

गोकुल ने बीच में ही बात काट दी। कहा—तुम्हीं न बतलाओ, नियम का पालन वह करेगा ही किस तरह? हम लोगों की देह कुली-मज़दूरों की है। हमसे नियमों की पाबन्दी हो सकती है। किन्तु उसका तो दूसरा हाल है। न-जाने कितना 'पास' करके वह देश के माथे की मणि हो गया है। उसकी देह को तुमने हमारी देह के बराबर समझ लिया! अरे, उधर कौन है—चिरकुट? जा तो जल्दी, भट्टाचार्यजी (पण्डित) को बुला ला। न होगा तो जितना रुपया लगेगा—मैं श्राद्ध के समय एवज़ दे दूँगा। उसके लिए मैं मा के पेट के भाई की जान न ले सकूँगा। उसको मैं सूतक में खाया जानेवाला सादा भोजन खिलाकर तकलीफ़ न दे सकूँगा। जिसके जी में आवे, इसके लिए भला-बुरा कहा करे।

चक्रवर्ती ने बहुत हड़बड़ाकर हामी भरते हुए कहा—सो तो ठीक है बड़े बाबू! किन्तु लोग कहेंगे—

"अजी लोगों के कहने-सुनने के डर से क्या मैं अपने भाई को मार डालूँ? चक्रवर्ती, तुम्हारी भी अजीब समझ है! नहीं, नहीं; फ़ेहरिस्त दिखलाकर उसको हैरान करने की अभी कोई ज़रूरत नहीं। पहले वह कुछ खाकर तनिक आराम तो कर ले" कहकर गोकुल अकारण ही उस बेचारे पर नाराज़ होकर चला गया।

[८]

विनोद ने ब्राह्मण के हाथ से चाय का प्याला लेकर फेंक दिया। किन्तु यह एक अन्तर्यामी ही ने देखा कि वह चाय किस तरह छिपकर चोरी से बनाई गई थी और प्याले ने किसकी छाती पर गिरकर कितनी चोट पहुँचाई।

दिन भर में विनोद ने कई आदमियों से थोड़ी-बहुत बात-चीत की, किन्तु बड़े भाई की परछाहीं देखकर भी वह दूर-दूर रहने लगा कि कहीं भेंट न हो जाय। इधर परछाहीं भी उसका पीछा छोड़ने की नहीं। विनोद जिस ओर मुँह फेरकर जाता उसी ओर गोकुल भी काम-काज की धुन में एकाएक जा पहुँचता। इसी तरह दिन ढल गया।

तीसरे पहर विनोद अपनी बैठक में अकेला बैठा था—एक काग़ज़ हाथ में लिये गोकुल आ पहुँचा। उसने तनिक अकारण सूखी हँसी हँसकर कहा—"कलकत्ते का डेरा छोड़कर तुम एकाएक

हज़ारीबाग़ चले गये—बाबूजी ने मरते समय—वह शायद तुम सुन चुके हो—उसे एक खेल समझो !" इसके बाद गोकुल ने फिर झूठी हँसी का अभिनय करके कहा—"तुम्हारा भी अजब हाल है ! तुमने ख़बर तक नहीं दी;—जाने दो, वह फिर देखा जायगा—पहले काम तो हो जाय—एक दानपत्र लिख देने से—समझ गया न विनोद—सिर्फ़ कुछ रुपये नाहक़ ख़र्च होंगे—समझ गया न—और यहाँ के पाजी आदमियों को तो तुम जानते ही हो—समझ लिया न भाई—सो वह कुछ नहीं है—बाबूजी भी कह गये हैं कि धन-दौलत तुम दोनों भाइयों की है; यह एक समझ लिया न—सो रहा करे—उसके लिए कुछ रुकेगा नहीं—और भाई, मेरे मिज़ाज का तो कुछ ठिकाना है नहीं। यह लोहे के सन्दूक़ की चाबी तुम अपने पास रक्खो। और पण्डित बुलाये गये हैं, किसको क्या दक्षिणा दी जाती है, कौन पण्डित किस श्रेणी का है, यह सब प्रबन्ध तुम न कर दोगे तो और किससे हो सकेगा। किन्तु मुझे तो इतनी .फ़ुरसत है नहीं कि दो घड़ी ठहरकर तुमसे सलाह कर लूँ",—अब उसने वह चाबी और काग़ज़ किसी तरह सामने रखकर वहाँ से तुरन्त खिसकना चाहा। जब से उसकी नींद खुली है तभी से वह मन में इन्हीं बातों को रट रहा था।

विनोद ने उल्लिखित दोनों चीज़ों को हाथ से हटाकर कहा—मुझे आप इसमें न लपेटें, मैं यह सब हाथ से छूने का नहीं।

पल भर में गोकुल की हँसी लुप्त हो गई । उसके चेहरे की रङ्गत बदल गई । उसकी दिन भर की उधेड़-बुन व्यर्थ होने को हुई । उसने पूछा—क्यों भला ? छुओगे क्यों नहीं ?

विनोद ने कहा—मुझे कोई जरूरत नहीं । मैं तो बाहरी आदमी हूँ, दो दिन के लिए आया हूँ,—दो दिन में फिर चला जाऊँगा ।

गोकुल ने कहा—चला जायगा ?

"जाना तो होगा ही इसके सिवा यह रोकड़ का मामला है । मैं हूँ दीन-दुखी । हिसाब में भूल-चूक हो जायगी तो शायद आप मुझे पुलिस के हवाले कर दें । तब तो बड़े घर की हवा खाने पर ही छुटकारा मिलेगा ।"

जवाब देने के लिए गोकुल के होंठ एक बार काँप करके रह गये । इसके बाद झुककर चाबी और काग़ज़ उठाकर वह उस कमरे से चला गया । धूम-धाम से पिता का श्राद्ध (तेरहीं) करके नाम कर लेने की इच्छा उसके जी से मरीचिका की भाँति बिला गई ।

मज़ा यह कि आज सबेरे से ही गोकुल के उत्साह और चिल्लाने-पुकारने का अन्त न था । दिन डूबते ही एकाएक जब वह अपने कम्बल के बिस्तर पर आकर लेट रहा तब उसकी स्त्री भीतर आकर बहुत की चकराई ।

"क्या तुम्हारी तबीअत ठीक नहीं है ?"

गोकुल ने उदासी के साथ कहा—ठीक है ।

"फिर इस तरह लेट क्यों रहे ?"

गोकुल ने कुछ उत्तर न दिया। मनोरमा ने दुबारा पूछा—देवर से भी कुछ बातचीत हुई ?

"नहीं।"

अब बड़ी वहू ने पास ही ज़मीन पर अच्छी तरह बैठकर बहुत ही दबे स्वर में कहा—सुना भी है, देवर सबसे क्या कहता फिरता है ?

गोकुल ने कुछ नहीं कहा। मनोरमा ने और भी समीप आकर कहा—कहता है, बाबूजी की बीमारी-ईमारी की हमें ख़बर ही नहीं मिली—हज़ारीबाग़ या न जाने कहाँ—तुम्हारा यह भाई न-जाने कितने दाँव-पेंच जानता है।

गोकुल ने सरलता से पूछा—दाँव-पेंच कैसे ? क्या तुम्हें उसकी बात पर विश्वास नहीं होता ?

"मुझे ? मैं क्या नासमझ हूँ ! गले तक गङ्गाजल में डूब-कर कहे तो भी उसकी बात पर मुझे भरोसा नहीं।"

गोकुल को यह बात बहुत ही भद्दी लगी। उसके इस असाधारण, बहुत कुछ 'पास' कुल-दीपक भाई के विरुद्ध यदि कोई कुछ कहता तो वह तुरन्त नाराज़ हो जाता था। किन्तु आज अपने हृदय की तह तक पहुँची व्यथा के मारे वह सुस्त हो गया था, इसी से चुप रह गया। घर में दिये का उजेला बहुत ही मद्धिम था। इस कारण मनोरमा अपने स्वामी का चेहरा देखकर उसके जी की बात को न भाँप सकी। कहने लगी—

ख़ूब चौकन्ने रहना। अब तरह-तरह की चालें चली जायँगी, फन्दे लगाये जायँगे, सबसे बचे रहना। बाबूजी से सलाह लिये बिना कहीं कोई काम न कर बैठना। वे कल सबेरे की गाड़ी से आ जायँगे—मैंने बहुत .ख़ुशामद करके चिट्ठी लिख भेजी है। कुछ भी कहो, बाबूजी के आये बिना हमारा डर किसी तरह हट नहीं सकता।

गोकुल उठ बैठा और बोला—क्या तुम्हारे बाबू आते हैं ?

"आयँगे क्यों नहीं ? वे न आवेंगे तो इस समय कौन सँभालेगा ? नीम-तला के कण्डू की आढ़त के बनाने-बिगाड़ने का हक़ बाबूजी को ही है। किन्तु वहाँ नौकर रहने के कारण वे अपनी बेटी और जमाई को बह न जाने देंगे।

गोकुल चुपचाप सुनने लगा। मनोरमा बड़ी .ख़ुशी से और .ख़ुशी से भी बढ़कर उत्साहित होकर कहने लगी—"तुम अपनी दूकान, रोज़गार, लेन-देन सब बाबूजी को सौंप दो। उनको सौंप देने पर फिर किसी को तनिक भी परवा न करनी होगी। सिर्फ़ कह दिया करना, "मैं नहीं जानता, बाबूजी को मालूम है।' बस, फिर देवर हो चाहे कोई और, किसी की हिम्मत उनके आगे दाँत निकालने की न होगी। समझ गये न ?" अब मनोरमा ने बहुत ही अर्थपूर्ण कटाक्ष किया।

नहीं कह सकते कि उस धुँधले उजाले में गोकुल ने उसे देखा या नहीं। किन्तु उसने न तो हाँ कहा और न ना। इसके बाद बहुत सी अच्छी-अच्छी बातें कहने पर भी मनोरमा को

जब स्वामी से कुछ भी उत्तर न मिला तब हवा के रुख का कुछ भी पता न पाकर उस रात के लिए वह शान्त हो गई।

दूसरे दिन सवेरे गोकुल ने बहुत ही हड़बड़ी में भवानी के कमरे के सामने आकर कहा—मा, लोहे के सन्दूक़ की चाबी क्या विनोद तुम्हारे पास रख गया है ?

भवानी ने संक्षेप में कहा—नहीं तो।

असल में चाबी गोकुल के पास ही थी। किन्तु उसने मन में बड़ा मतलब गाँठकर यह झूठ बात मा से कही थी। उसने सोचा था कि विनोद के हाथ में ऐसी चीज़ के पहुँचने की बात सुनकर मा ज़रूर घबरा उठेंगी। किन्तु उनका यह संक्षिप्त उत्तर सुनने से गोकुल का हिकमती हवाई महल पल भर में ढह गया। तब उसने उदास होकर धीरे-धीरे कहा—क्या जानूँ, चाबी उसने कहीं रख दी है या मेरे ही हाथ से कहीं गिर पड़ी है !

भवानी ने कुछ भी नहीं कहा। घर में ऐसी भीड़भाड़ के समय सन्दूक़ की चाबी का पता न लगने का संवाद पाकर भी जब मा ने रत्ती भर चिन्ता प्रकट न की, और जब उन्होंने एक बार आँख उठाकर यह तक न देखा कि उनकी इस निर्लिप्तता से गोकुल की छाती में शूल सा छिद गया है तब गोकुल को कहीं ओर-छोर ही न देख पड़ा कि वह क्या कहे अथवा गृहस्थी के सम्बन्ध में मा को किस प्रकार सावधान करे। तनिक चुपचाप खड़े रहकर उसने कहा—बुआ इत्यादि को बुलाने शम्भु और दरबारी गये थे। अब तक कोई आया नहीं ?

भवानी ने मुलायमियत से उत्तर दिया—क्या जानूँ, कुछ कह नहीं सकती।

गोकुल ने कहा—मा, तुमने अच्छा किया कि बुलाने को आदमी भेजने की मुझे याद दिला दी। अब न आवें तो उनकी मर्ज़ी। किन्तु हम लोग तो उलहने से बच गये। तुम कितना आगा-पीछा सोचकर काम करती हो मा, मैं इसी को अचरज के साथ सोचता हूँ। हमारा—

भवानी चुपचाप थीं। गोकुल के मुँह से ऐसी बातें सुनने पर भी उनके उदास गम्भीर चेहरे पर सन्तोष अथवा आनन्द की तनिक सी झलक न देख पड़ी। देर तक गोकुल वहाँ चुपचाप खड़ा रहकर दूसरी ओर चला गया।

बाहर आते ही गोकुल घबरा गया। इसी बीच ज़िले के नये डिपुटी और कई एक वकील-मुख़्तार न्यौता पाकर आये थे। उन्हें बिठाकर विनोद अदब से बातचीत कर रहा था।

इन सब भले आदमियों को अपने छोटे भाई का परिचय देने का मौक़ा ढूँढ़ने के लिए गोकुल तड़फड़ाने लगा। और विनोद के ही आगे उसके 'इम्तहान पास' करने की ख़बर प्रकट की न जा सकती थी—क्योंकि ऐसी बात सुनते ही वह नाराज़ हो जाता है।

गोकुल ने तनिक इधर-उधर घूमकर हाकिम के सामने पहुँचकर एक-दम फ़र्शी सलाम किया और नम्रता के साथ कहा—यह मेरा छोटा भाई विनोद—आनर ग्रेजुएट—

विनोद अब आँखें तरेरकर गोकुल की ओर देखने लगा; किन्तु गोकुल ने इसकी कुछ परवा न करके हाथ जोड़कर कहा—मेरी सात पीढ़ियों का पुण्य है कि आपने यहाँ आने की कृपा की है,—विनोद, हुज़ूर से अँगरेज़ी में बातचीत क्यों नहीं करते ? ये हाकिम-हुक्काम हैं; इनको बङ्गाली बोली में बातचीत करना क्या ठीक लगता है ? लोग बात सुनेंगे तो तुम्हीं को भला क्या कहेंगे ?

आस-पास जो भलेमानस बैठे हुए थे उन्होंने ऊपर नज़र उठाकर देखा। डिपुटी बाबू बड़े पेसोपेश में पड़े; असह्य लज्जा के मारे विनोद का चेहरा सुर्ख़ हो गया। बड़े भाई के स्वभाव को वह बख़ूबी जानता था। यदि उन्हें रोका न जायगा तो वे न जाने कहाँ तक आगे बढ़ जायँगे।

"एक बात तो सुनिए" कहकर विनोद गोकुल को, हाथ पकड़कर, एक तरह से ज़बर्दस्ती एक ओर ले गया और कहा—दादा, क्या आप मुझे इसी दम घर से खदेड़ना चाहते हैं ? जो ऐसा किया जायगा तो मैं यहाँ पल भर भी न ठहरूँगा।

गोकुल ने डरकर पूछा—क्यों भाई, क्या हुआ ?

"मैं पचीसों बार कह चुका कि आपके इस अत्याचार को मैं सहन नहीं कर सकता, फिर भी क्या आप मुझे रिहा न करेंगे ? मेरी तरह पास-शुदा आदमी तो गली-कूचों में फिरते हैं।" कहकर विनोद उत्तेजना और क्रोध से मुँह बनाकर अपनी जगह पर जा बैठा।

गोकुल लज्जा के मारे सिकुड़कर दूसरी ओर चला गया। शायद यह कहता गया होगा कि ऐसा काम वह कभी न करेगा। और आध घण्टे में ही विनोद ने और शायद वहाँ पर उपस्थित अन्य लोगों ने सुना कि गोकुल ज़ोर-ज़ोर से एक नौकर को सावधान कर रहा है कि छोटे बाबू के आनर ग्रेजुएट के सोने के तमग़े को हथिया कर लोग-बाग मैला न कर डालें।

डिपुटी बाबू ने मन्द मुसकुराहट के साथ एक बार विनोद की ओर देखकर दूसरी ओर नज़र फेर ली।

[६]

नीमतला के कुण्डू की आढ़त की आँख फोड़कर गोकुल के ससुर साहब आ पहुँचे। उनके सिर के बाल तो पक गये हैं पर मूँछें काली हैं। नाटा क़द है। मँजे हुए आदमी हैं। आढ़त के छोकरे-नौकर पीठ-पीछे उन्हें ऊजड़ का उल्लू कहा करते थे। गोकुल के घर आकर वे घड़ी भर में ही हुकूमत करने लगे, कोई घण्टे भर के बीच में उन्होंने सारे मुहल्लेवालों से जान-पहचान कर ली। इस काम-काज में पक्के हिसाबी ससुर को पाकर गोकुल की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। सभी नाते-रिश्तेवालों ने सुना कि बेटी और दामाद के ख़ुशामद करने पर, लाचार होकर, वे दयाकर कारबार सँभालने पधारे हैं।

कोई एक पहर रात बीत गई। खिलाने-पिलाने से क़रीब-क़रीब छुट्टी मिल गई। नौकर ने ख़बर दी कि मालिक बुला रहे

हैं। गोकुल उठकर अदब से कमरे में पहुँचा। ससुर निमाई राय, क़ीमती गलीचे के आसन पर बैठे, नतिनी को लिये जल-पान कर रहे हैं, पास ही बैठी बेटी मनोरमा माथे पर घूँघट को योंही तनिक खींचकर सौतेली सास का असली परिचय धीरे-धीरे पिता को दे रही है। इसी समय वहाँ पर गोकुल पहुँचा।

ससुरजी ने एक ही साँस में खीर का कटोरा खाली करके मूँछों को कटोरे के किनारे से पोंछकर नजर घुमाई और कहा—बाबू, तुमसे एक बात पूछनी है। हाथ का पत्थर और मुँह की बात दोनों, एक बार बाहर निकलते ही, क्या फिर वापस आ सकते हैं?

गोकुल ने कुछ सोच न पाकर कहा—जी नहीं।

निमाई ने बेटी की ओर तनिक स्निग्ध गम्भीर हास्य करके दामाद से कहा—तो फिर?

इस 'तो फिर' का उत्तर जामाता को आकाश-पाताल में ढूँढ़ने पर भी न मिला—वह चुप रहा। निमाई धीरे-धीरे भूमिका को मजबूत करने लगे; कहा—बाबू, तुम दोनों ने जो रो-गाकर मुझे इस तूफ़ान में पतवार सँभालने को बुला भेजा है सो मैं सँभाल सकता हूँ, सँभालूँगा भी—किन्तु तुम्हारे हाथ-पैर मारने से तो चलने का नहीं, जहाँ बैठने को कहूँ, जहाँ खड़े होने को कहूँ, ठीक वैसा ही करना चाहिए। तभी तो मैं इस समुद्र में पेश पाऊँगा। विनोद बबुआ हजारीबाग में थे, यह जो उलटी-सीधी बातें इधर-उधर कहते फिरते हो, यह क्या हो

रहा है ? यह तो अपने हाथों अपने पैर में कुल्हाड़ा मारना है। क्या यह तुम सोच-समझ नहीं सकते ?

बाप की वक्तृता सुनकर बेटी आनन्द के मारे गद्गद होकर बहुत ही धीरे-धीरे कहने लगी—कुल्हाड़ा तो मारा ही जा रहा है। इसी से तो, बाबूजी, हम लोगों ने तुम्हें बुलवा लिया है। हम कुछ नहीं जानते—तुम जो कहोगे, करोगे, वही होगा। हम लोग तो पूछेंगे तक नहीं कि तुम क्या करते हो और क्या नहीं।

पिता ने प्रसन्न होकर कहा—बेटी, मैं यही तो चाहता हूँ। मामला-मुक़द्दमा बड़ी बला है। तुमने सुना नहीं, लोग गाली देते हैं कि 'तुझे मुक़द्दमे में उलझना पड़े।' वही मुक़दमे का उलझन इस समय तुम्हारे घर में है। हम लोगों का तो बड़ा पक्का सिर है, इसी से हिम्मत करता हूँ कि मैं तुम लोगों को खींच-खाँचकर किनारे लगा दूँगा—फिर मुझ पर चाहे जैसी बीते। एक-एक करके उनका गला दबाकर निकाल दूँगा, तभी मेरा नाम वैद्यपाड़े का निमाई राय है।

अब उन्होंने अपना चेहरा इस ढंग का कर लिया जैसा कि वाटरलू की लड़ाई जीतकर वेलिंगटन का भी, गर्व प्रकट करने को, न हुआ होगा। उन्होंने गरदन बढ़ाकर दरवाज़े के बाहर दूर तक झाँककर कहा—बेटी, यहीं पर मेरे हाथ पर तनिक पानी डाल दे, मुँह धो लूँ; बाहर न जाऊँगा। तनिक बाहर जाकर इधर-उधर देख तो ले, कोई कहीं कान तो नहीं लगाये हुए है। कुछ भरोसा थोड़े है—यह शत्रुपुरी है।

मनोरमा यथानिर्दिष्ट कर्तव्य समाप्त करके अपने स्थान पर आकर बैठ गई। गोकुल का चेहरा उतर गया। वह घबराहट के साथ एक बार स्त्री की ओर एक बार श्वशुर की ओर देखने लगा। अब तक बाप-बेटी के बीच जो बातचीत हुई उसका एक अक्षर भी गोकुल की समझ में नहीं आया। यह किसकी चर्चा है, किसके घर में मुक़द्दमे की उलझन है, गला दबाकर किसको कौन निकालना चाहता है, किसका क्या सत्यानाश हो गया—इत्यादि इशारों का रत्ती भर भी मतलब न समझ सकने से वह बावला-सा हो गया। निमाई ने कहा—खड़े क्यों हो रहे बाबू? तनिक जमकर बैठो—दो-चार बातें हो जाने दो।

गोकुल वहीं बैठ गया। निमाई राय कहने लगे—यह तुम्हारा अच्छा समय है। बाबू, कुछ कर लेना चाहो तो उसका यही समय है। किन्तु एक सत्यानाशी मुक़द्दमा जो खड़ा होगा उसे मैं प्रत्यक्ष देख रहा हूँ। सो खड़ा हो न, मुझे इसका डर नहीं है—हाटखोला का यदु वकील और तारिणी मुख्तार इस बात को जानता है। वैद्यपाड़े के निमाई राय का नाम सुनकर नामी-नामी वकील-बैरिस्टरों के चेहरों पर हवाइयाँ उड़ने लगती हैं—फिर यह तो मामूली छोकरा है, दो पन्ने अँगरेज़ी के सीख गया है।

गोकुल से अब न रहा गया। उसने डरकर नम्रता से पूछा—आप किसकी बात कह रहे हैं? किसका कैसा मुक़द्दमा?

अब तो चकरा जाने की पारी है वैद्यपाड़े के निमाई राय की। प्रश्न सुनकर वे गम्भीर विस्मय के साथ गोकुल के मुँह की ओर ताकते रह गये।

मनोरमा व्याकुल होकर ज़ोर से बोल उठी—देख लिया न बाबूजी, मैंने जो कहा था सो ठीक है न? पूछते हैं, किसका मुक़दमा! तुम्हारी सौगन्ध खाकर कहती हूँ बाबूजी, इनकी तरह भोला-भाला आदमी दुनिया भर में नहीं है। इन्हें ठगकर देवर सर्वस्व ले ले तो क्या बड़ी बात है? तुम्हारे आ जाने से भरोसा हो गया है, नहीं तो बाबूजी, साल भर में देखते कि तुम्हारी बेटी के लड़के-वाले मारे-मारे फिरते हैं।

निमाई ने साँस छोड़कर कहा—यही जँचता है। ख़ैर, जाने दो। अब वह डर नहीं है। मैं आ गया हूँ, किन्तु तुम्हारी आढ़त में जो ये चकत्ती-फकत्ती हैं इन्हें मैं पहले ही धता बताऊँगा। ये लोग हैं दूलह की मौसी, दुलहिन की फूफी, समझ गई न बेटी! भीतर ही भीतर यदि ये लोग तुम्हारे विनोद के दल में न मिल जायँ तो मेरा नाम निमाई राय नहीं। मैं तो आदमी की छाया देखकर उसके मन की बात को ताड़ लेता हूँ।

अब निमाई एक बार बेटी की ओर और एक बार जमाई की ओर देखने लगे।

बेटी ने उसी दम सम्मति देकर कहा—इसी दम! इसी दम! मैं क्या जानती नहीं हूँ बाबूजी, सब समझती हूँ। सुन-समझ-

कर भी अजान बनी बैठी हूँ। जिसे चाहो उसे रक्खो, जिसे चाहो निकाल बाहर करो। हम लोग कुछ न कहेंगे।

इतनी देर में गोकुल ने मामले को साफ़-साफ़ समझ लिया। उसका छोटा भाई विनोद उसी के विरुद्ध मुक़द्दमा खड़ा करने की साजिश कर रहा है! और मज़ा यह कि इन लोगों ने जब उस (विनोद) की सारी अभिसन्धि समझ ली है तब गोकुल निरे अबोध की तरह उसी छोटे भाई को राज़ी करने के लिए लगातार उसके पीछे-पीछे घूमता रहा है। पहले तो गोकुल के क्रोध की आग मानो उसके ब्रह्मरन्ध्र को फोड़कर जल उठी; किन्तु सिर्फ़ लहमे भर के लिए। क्षण भर में सब बुझ गई, घने अँधेरे में उसकी दृष्टि, उसकी बुद्धि, उसका चैतन्य तक मानो उलट-पलट गया। उसके कानों में मानो कितने ही लोग लगातार चिल्लाकर कहने लगे—विनोद ने उस पर अदालत में नालिश की है।

निमाई ने कहा—रुपयों का मोह करने से काम न बनेगा बाबू। गवाहों को अपनी मुट्ठी में करना होगा। उन्हीं की गवाही तो मुक़द्दमे की जड़-बुनियाद है। समझ लिया न!

गोकुल माथा झुकाकर कठपुतला बना बैठा रहा। समझा कि नहीं, इसका उसने उत्तर न दिया। शायद उसने बात सुनी ही नहीं।

किन्तु बेटी ने कान खोलकर सुन ली थी। उसने बँधा हुआ हुक्म भी दे दिया। बेटी और जमाई हैं अवश्य एक ही चीज़।

और अन्यान्य बातों में उसी की बात से काम चल सकता है सही, किन्तु गवाहों की मद में गुप्त रूप से ख़र्च करने का बेधड़क उत्तर जमाई के ही मुँह से न पाकर राय महाशय का उत्साह मानो ढीला पड़ गया। उन्होंने कहा—अच्छा, यह सलाह कल-परसों किसी दिन शान्ति से कर ली जायगी। आज जाओ बाबू, हाथ-मुँह धोकर कुछ खाओ-पिओ। दिन भर—

बात पूरी होने के पहले ही गोकुल एकाएक उठकर चुपचाप चला गया। राय महाशय ने बेटी की ओर देखकर कहा—उन्होंने तो बात-चीत तक नहीं की। भला बिना रुपये-पैसे के कहीं मामले-मुक़दमे होते हैं? दूसरे फ़रीक़ के गवाह क्या ख़ाली हाथ से तोड़े जा सकते हैं? डर जाने से कहीं काम हुआ है?

निमाई मँजे हुए आदमी हैं। आदमी की सूरत देखते ही उसके मन की बात को ताड़ लेते हैं। अतएव उन्होंने फ़ौरन से पेश्तर समझ लिया कि ख़र्च का ख़याल करके ही गोकुल चुपका हो रहा है—उसने कुछ बात-चीत तक नहीं की है। किन्तु इससे नाराज़ होकर वे इस बेटी की घोर विपत्ति के दिनों में दूर नहीं रह सकते। बे-हिसाब रुपये ख़र्च करने का गुरुतर भार अपने माथे लेने को उनके जैसे आत्मीय के सिवा और कौन तैयार होगा? इसलिए अपनी कितनी ही हानि क्यों न हो,—कुण्डू की आढ़तवाली नौकरी तक छूट जाने पर भी—वे पीछे पैर नहीं हटा सकते। लोग सुनेंगे तो थूकेंगे नहीं! गोकुल के चले जाने

गोकुल—किस किसको बताऊँ, सभी तो कहते हैं। कौन नहीं जानता कि विनोद मुझ (गोकुल) पर नालिश करेगा ?

भवानी—वाह, मैं तो नहीं जानती।

"भला ! जानती हो या नहीं—यह हम लोग अभी देख लेते हैं।"

बड़े क्रोध से गोकुल वहाँ से जा रहा था कि लौट पड़ा। अब उसके मुँह से उसके श्वशुर की ही बात एकाएक निकल पड़ी—"तुम लोग जैसे शत्रुओं को मैं तो अब घर में नहीं रख सकता।"

किन्तु इस बात के कहते ही गोकुल की रुद्र मूर्ति डर के मारे विवर्ण और क्षुद्र हो गई; और व्याध के खींचे हुए धनुष के सामने से डरकर हिरन जिस तरह अन्धाधुन्ध भाग खड़ा होता है, दिशा-विदिशा की सुधि नहीं करता, उसी तरह गोकुल मा के आगे से फुर्ती से निकल भागा। उसने समझ लिया कि उसने अपने मुँह से क्या कह डाला है; इसी कारण उस दिन उसका न तो दिन में कहीं पता मिला और न रात में। नातेदारों को जिस समय भोजन कराया गया उस समय भी वह उपस्थित न था। पूछने पर भवानी को ज्ञात हुआ कि ज़रूरी तक़ाज़ा करने को बड़े बाबू (गोकुल) गये हैं; किसी से कह नहीं गये कि कब तक वापस आवेंगे। निमाई राय ने मुखिया बनकर सबका यथायोग्य आदर-सत्कार किया। जिन थोड़े से बाहरी आदमियों को न्योता दिया गया था उन्हीं के साथ बैठकर विनोद चुपचाप भोजन कर गया।

तूफ़ान आने से पहले निरानन्द प्रकृति जिस प्रकार स्तब्ध शान्त हो जाती है उसी प्रकार घर भर में, बहुत आदमी रहने पर भी, उदासी बरसने लगी। कोई विशेष कारण के जाने बिना भी नौकर-चाकर मानो डरे हुए सकपकाये से इधर-उधर फिरने लगे। इसी प्रकार दो दिन और भी बीते।

जो लोग श्राद्ध के उपलक्ष में आये थे वे एक-एक करके बिदा हो गये। अपने लड़के-बच्चों को लेकर बुआजी बर्दवान चली गईं। विनोद अपनी बाहर की बैठक में ही सबेरे से शाम तक बैठा रहता है—किसी से बात-चीत नहीं करता। भीतर भवानी मानो गूँगी हो गई हैं। गोकुल भागता फिरता है—भीतर या बाहर कहीं उसकी आहट नहीं मिलती। इसी प्रकार तीन-चार दिन और भी बीते। मनोरमा और उसके बेटे-बेटियों के सिवा मानो इस घर में कोई आदमी ही नहीं है।

निमाई राय अपना कलकत्ते का सम्बन्ध तोड़ने गये हुए थे; उस दिन सबेरे, शायद कुण्डू-परिवार को अपार समुद्र में बहाकर ही बेटी-जमाई को पार लगाने के लिए लौट आये। आज उनका छोटा लड़का भी साथ आया था। उसके आगमन का प्रकृत कारण यद्यपि उस समय भी स्पष्ट नहीं हुआ था, फिर भी यह समझ में आ गया था कि वह अपने बहन-बहनोई के देखने भर को ही व्याकुल होकर नहीं दौड़ा आया है। इस दर्मियान बहुत बड़े समझदार ससुरजी के सबल उत्साह के अभाव से गोकुल जिस प्रकार मुर्दार हो गया था, आज उसका भी वह

भाव न था। मनोरमा की तो कुछ पूछिए ही मत। सवेरे से वह सारे घर में चक्कर पर चक्कर लगाने लगी। खाने-पीने से छुट्टी मिलने पर मनोरमा की कोठरी में ही इन लोगों की मजलिस बैठी और थोड़ी देर के वाद-विवाद में ही सब कुछ तय हो गया।

आज चक्रवर्ती तलब किया गया। उसे नौकरी से अलग करने के लिए पहले निमाई राय सब काग़ज़-पत्तर बारीकी से समझने लगे। बहुत ही पीड़ित उद्भ्रान्त-चित्त होने के कारण न तो वह बेचारा सब बातों का जवाब दे सकता था और न हिसाब ही समझा पाता था। लगातार धमकियाँ सुनते-सुनते और बाप-पूत की कड़ी जिरह के मारे घबराकर वह अपने आपको पक्का चोर साबित करा रहा था।

निमाई ने कहा—मैं न था, इसी से तुम हमारी बहुत बड़ी रक़म हज़म कर गये, किन्तु यह अब होने का नहीं। जाओ, तुमको जवाब हो गया।

चक्रवर्ती की आँखों से आँसू गिरने लगे। उसने कहा—बाबू, मैं कुछ आज का नया नौकर नहीं हूँ, मुझे मालिक अच्छी तरह जानते थे।

गोकुल ने सिर झुका लिया। राय महाशय के छोटे बेटे ने मुँह बनाकर कहा—तो क्या अपने मालिक की तरह तुमने बाबूजी को गोरू समझ लिया है जी? अब तुम्हारी दाल गलने की नहीं, चल दो यहाँ से।

इस नादान साले के बिलकुल अभद्र तिरस्कार से व्यथित होकर चक्रवर्ती ने आँखें पोंछ लीं और दम भर चुप रहकर गोकुल को उद्देश करके कहा—बाबू, मेरी चार महीने की तलब—

गोकुल चटपट बोल उठा—वह तो हुई है चक्रवर्तीजी; और भी यदि—

बात पूरी न होने पाई। निमाई ने दाहना हाथ फैलाकर गोकुल को रोकते हुए जलद-गम्भीर स्वर में कहा—तुम ठहरो तो बबुआ।

चक्रवर्ती से कहा—बाबू वे नहीं हैं, मैं हूँ। मैं जो करूँगा वही होगा। तुमको तलब मिलने की नहीं। तुम्हें जो 'बड़े घर' से बचा दिया, यही अपने बाप का भाग्य समझो।

चक्रवर्ती चुपचाप उठकर चला गया।

अब तक बातचीत न कर सकने से मनोरमा भीतर ही भीतर बेचैन हो रही थी। वहाँ से चक्रवर्ती के हटते ही उसने गम्भीर मुँह करके स्वामी को लक्ष्य करके, धीरे-धीरे, दुलार के ढंग से कहा—जो फिर तुम बाबूजी की बात काटोगे तो या तो मैं फाँसी लगाकर जान दे दूँगी या बच्चों को लेकर नैहर चली जाऊँगी।

गोकुल ने कुछ उत्तर नहीं दिया, नीचा सिर किये बैठा रहा। पिता और भ्राता के सामने पति की यह वश्यता देखकर मनोरमा ने सुख और गर्व से मगन होकर अस्फुट स्वर में कहा—अच्छा बाबूजी, हमारे नन्दलाल को दूकान के किसी काम में न लगा दो?

निमाई ने कहा—इसी लिए तो छोकरे को साथ लेता आया हूँ। मैं तो यहाँ बहुत दिनों तक ठहर सकूँगा नहीं; नहीं तो हमारा रफ़्तनी का कारबार एक-दम बैठ जायगा। भला मुझे आने की .फुरसत भी थी ? बेटी, मालिक से झगड़ा करके चला आया हूँ। उन्होंने एक प्रकार से आँसू बहाकर कहा—'राय महाशय, तुम्हारे लौटकर आने पर ही मुझे सुख से नींद आवेगी और खुलकर भूख लगेगी। दिन-रात तुम्हारी बाट जोहते बीतेगी।' इससे सोचता हूँ बेटी, अपने नन्दलाल को ही सब समझा-बुझा जाऊँ, सिखा-पढ़ा जाऊँ। कुछ भी हो, है तो मेरा ही बेटा।

"तो ऐसा ही कर जाओ बाबूजी। मैं इसी के लिए तो—"

अकस्मात् मनोरमा माथे पर घूँघट के छोर को बढ़ाकर चुप हो गई। कोठरी के दरवाज़े पर चक्रवर्ती आकर खड़ा हो गया था। उसने कहा—बाबू, माजी आई हैं—

एकाएक 'माजी आई हैं' सुनकर गोकुल हड़बड़ा गया। इधर सात-आठ दिन से उनसे भेंट तक नहीं हुई। किवाड़ की ओट में खड़े होकर भवानी ने स्वाभाविक स्वर में पुकारा—गोकुल !

गोकुल ने उसी दम अदब से उठकर, खड़े होकर, उत्तर दिया—क्या है मा ?

भवानी ने आड़ में रहकर ही उसी प्रकार साफ़ गले से कहा—यह पागलपन करने के लिए तुमको किसने कहा है ? चक्रवर्तीजी बहुत पुराने आदमी हैं, उन्हें मैं उनकी ज़िन्दगी भर के

लिए बहाल करती हूँ। सन्दूक़ की चाबी, बही-खाता वग़ैरह लेकर उन्हें दूकान पर जाने दो।

घर पर गाज गिरने से भी शायद लोगों को इतना अचरज न होता। भवानी ने तनिक ठहरकर और भी कहा—एक बात और भी है। समधीजी दया करके आये हैं—सो आदर से यहाँ दो दिन रहें, देखें-सुनें; किन्तु उन्हें यह फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं कि दूकान में चोरी हो रही है या क्या हो रहा है। चक्रवर्तीजी, आप देर न कीजिए, जाइए। मैं नहीं चाहती कि कोई बाहरी आदमी दूकान में घुसकर बही-खाता उलटे-पलटे। गोकुल, चाबी दे, वे जायँ।

बस, किसी के उत्तर की रत्ती भर भी परवा न करके भवानी चली गईं। कोठरी के भीतर उनके पैरों की आहट साफ़ सुन पड़ी। जब सन्नाटे का भाव हट गया तब निमाई राय ने सूखी हँसी हँसकर कहा—इसी को कहते हैं "पराये माल पर अलल्ले-तलल्ले करना।" देख लिया न बबुआ, हुक्म देने का ढंग!

किन्तु बबुआ गोकुल ने कुछ भी उत्तर न दिया। उत्तर दिया उनके (निमाई के) ख़ास पुत्र-रत्न ने। उसने कहा—बाबूजी, यह तो समझी हुई बात है। तुम्हारे रहते तो चोरी-चकारी होने से रही! बलिहारी है हुक्म की!

पिता ने हामी भरकर सिर हिलाकर कहा—"सो तो हई है।" और चक्रवर्ती पर नज़र पड़ते ही जल-भुनकर, मुँह बना कर, कहा—अरे अब किसलिए खड़े हो, जाओ न। जा करके

उन्हें बुला लाये ! नमकहराम ! जेलखाने नहीं भिजवाया इसी से ! हट जाओ सामने से। ब्राह्मण समझकर मैंने सोचा था—मरने भी दो; जो हो चुका, सो हो चुका, न होगा तो दो-चार रुपये दे ही दिये जायँगे—किन्तु फिर ! असल में तुम्हें 'बड़े घर' में भिजवाना ही मेरा कर्तव्य होना चाहिए था !

किन्तु स्वामी का रङ्ग-ढङ्ग देखकर मनोरमा ने कुछ कहने का साहस नहीं किया। गोकुल जो माथा नीचे किये खड़ा था सो उसी हालत में एक-सा कठपुतली की तरह खड़ा रहा। चक्रवर्ती ने किसी की किसी बात का उत्तर न देकर मालिक को लक्ष्य करके नम्रता से कहा—तो फिर मैं कागज़-पत्तर लिये चलता हूँ। सन्दूक़ की चाबी दीजिए।

गोकुल ने चुपचाप कमर से चाबियों का गुच्छा निकालकर चक्रवर्ती के पास फेंक दिया। चाबी को अंटी में लगाकर और बही-खाते को बग़ल में लिये चक्रवर्ती हँसी को दबाकर मज़े में हिलता-डुलता चला गया। उसके इस तरह जाने का अर्थ बहुत ही साफ़ है। अतएव किसी से कुछ पूछे विना ही वैद्यपाड़ के निमाई राय के स्याह चेहरे पर किसी ने मानो दुनिया भर की कालिख पोत दी।

इसके उपरांत इस मन्त्रणागृह में जो दृश्य घटित हुआ वह सचमुच अनिर्वचनीय है। बाप और भाई की इस अचिन्तनीय विकट लाञ्छना से मनोरमा ने ज्ञान खोकर स्वामी के प्रति उग्र तिरस्कार, धमकी और सब प्रकार का डर दिखलाकर अनुनय,

विनय और अन्त में मर्मान्तक विलाप करके भी, जब उसके मुँह से अपने पिता के पक्ष में वह एक बात तक न निकलवा पाई तब मुँह ढाँककर मुर्दा की तरह लेट रही। लज्जा और क्षोभ के मारे रोआसे हो रहे गोकुल ने कहा—भला मैं कैसे समझ लेता कि मा शत्रुता करके ऐसा हुक्म देंगी ?

निमाई ने ठण्डी साँस लेकर कहा—ख़ैर। झगड़े से बचे। एक बड़ी उलझन से पिण्ड छूटा। इधर मेरे शिवतुल्य मालिक कितनी ख़ुशामद कर रहे हैं—भला मुझे कहीं ठहरने को फ़ुरसत भी है! इसके सिवा मुझे ज़रूरत ही क्या है जो घर का खाकर जङ्गल के जानवरों को भगाता फिरूँ! किन्तु बेटी मनोरमा, यदि बच्चों का हाथ थामकर तुम्हें दर-दर फिरना पड़े—सो तो होगा ही, आँखों के आगे साफ़ देख रहा हूँ—तो फिर मुझे दोष न देना कि बाबूजी ने एक बार घूमकर देखा तक नहीं। ऐसा बाप मैं नहीं हूँ, यह अभी से कहे जाता हूँ—फिर चाहे बेटी हो, चाहे जमाई। मेरे पास लल्लो-पत्तो का काम नहीं।

अब निमाई ने दामाद गोकुल की ओर तीव्र वक्र कटाक्ष किया। किन्तु वह बेटे के सिवा और किसी के काम न आया। वे उसी दम और भी तेज़ कण्ठस्वर से कहने लगे—मैंने अभी तक पीठ नहीं फेरी है, किन्तु जहाँ एक बार परवा छोड़ी तहाँ फिर निमाई किसी का लिहाज़ करनेवाला नहीं। ब्रह्मा-विष्णु के मनाये भी मानने का नहीं—सो इस पर तुम दोनों एक बार निराले में विचार कर लो। बेटा नन्दलाल, ढाई बज गया; मैं

साढ़े तीन की गाड़ी से जाऊँगा। असबाव ठीक-ठाक कर रक्खो—तुम तो जानते हो कि पृथिवी भले ही उलट जाय, किन्तु तुम्हारे बाप की बात में रद्दो-बदल नहीं हो सकता।

अब वे बड़ी शेखी से बेटे का हाथ थामकर, बेटी और जमाई को सोच-विचार करने के लिए एक घण्टे का समय देकर वहाँ से उठ गये।

किन्तु कुछ भी काम न बना। एक घण्टा तो बहुत ही थोड़ा समय है—तीन दिन तक उपस्थित रहकर लगातार मान-अभिमान करने, राज़ी-नाराज़ी दिखाने और कटूक्तियाँ सुनाने पर भी गोकुल के मुँह से दूसरी बात न निकलवाई जा सकी। ससुर के इस अत्यन्त अपमान से उसे स्वयं अपार लज्जा और क्षोभ हुआ। किन्तु माता की सुस्पष्ट आज्ञा के विरुद्ध वह किस प्रकार क्या करे—यह कहीं खोजने पर भी न पाकर सब तरह की लानत और तोहमत को वह चुपचाप सहने लगा।

[११]

निमाई ने जब देखा कि उनकी सारी आशा-आकाङ्क्षाएँ, जल्पना-कल्पनाएँ निष्फल हो गईं तब वे भीषण हो उठे; और स्पष्ट रूप से धमकाने को लाचार हुए कि हम नौकरी छोड़वाकर बुलाये गये हैं, इस कारण हर्जाना देना पड़ेगा। इस बीच उन्होंने बनर्जी बाबू (मास्टर साहब) को अपनी मुट्ठी में कर लिया था। बनर्जी बाबू आकर गोकुल को नासमझ, अन्धा

आदि कहकर उसका तिरस्कार करने लगे। उन्होंने एक ऐसा भयानक इशारा किया जिससे मालूम हुआ कि निमाई राय का अपमान किया जायगा तो शायद वे विनोद के तरफ़दार हो जायँ।

गोकुल ने कातर कण्ठ से कहा—मास्टर साहब, मैं करूँ क्या ? मा तो उन्हें घर में रहने देना पसन्द ही नहीं करतीं। उन्हें दूकान के भीतर न धँसने देने का चक्रवर्तीजी को हुक्म दिया है।

मास्टर साहब ने पूछा—कारबार, जायदाद वग़ैरह तुम्हारी है या तुम्हारी मा की ? इसके सिवा यह तो तुम्हें मालूम होगा ही कि तुम्हारी विमाता अब तुम्हारे शत्रुपक्ष में है ?

गोकुल के सिर हिलाकर स्वीकार करने पर बनर्जी बाबू ने ख़ुश होकर कहा—तो भैया, पागलपन मत करो। राय महाशय को जायदाद, हिसाब-किताब और दूकान सौंपकर चुपचाप बैठे-बैठे मज़ा देखो। नहीं तो ऐसा पक्का मँजा हुआ आदमी इस तरफ़ ढूँढ़ने से भी मिलने का नहीं। मैं भी होशियार हूँ, पर मुझे वक़्त कहाँ ?

गोकुल ने कहा—मास्टर साहब, यह तो मैं जानता हूँ; किन्तु मा की राय के ख़िलाफ़ कोई भी काम करने की बाबूजी मनाही जो कर गये हैं।

बनर्जी ने चिढ़ाने के लिए हँसकर कहा—मनाही ! तुम्हारे बाप को क्या मालूम था कि मा तुम्हारे विरुद्ध हो जायगी ? मनाही का ख़याल करोगे तो क्या जायदाद को चौपट होने दोगे ?

इन प्रश्नों का उत्तर गोकुल क्या देता ? इसी से गरदन झुकाये चुप मारे बैठा रहा। आड़ में राय महाशय सब सुन रहे थे। अब सामने आकर उपस्थित हो गये। इन दोनों महारथियों की संयुक्त जिरह के सामने गोकुल डूबने-उतराने लगा। उसे नीचे मुँह लटकाये निरुत्तर देखकर दोनों ही प्रसन्न हुए और उसकी इस सुबुद्धि को बार-बार सराहने लगे।

बनर्जी बाबू जब घर जाने को तैयार हुए तब सफल-मनोरथ राय महाशय ने आज उनकी चरण-रज को अपने माथे से लगाकर प्रणाम किया। उन्होंने भी स्नेह से गोकुल की पीठ ठोंककर कहा—मैं असीस देता हूँ गोकुल, तुमने अपना सर्वस्व जिस तरह हम लोगों के हाथ में सौंप दिया है, उसी प्रकार हम लोग तुम्हारी देह में तनिक सी आँच तक न लगने देंगे। क्या कहते हो राय महाशय ?

राय महाशय ने आनन्द और विनय से गद्‌गद होकर कहा—आपके आशीर्वाद से यह तो दस आदमी देख ही लेंगे। किन्तु अब मैं इस घर में शत्रुओं को एक दिन भी नहीं रहने देना चाहता। यह मैं आपसे कहे देता हूँ मास्टर साहब। फिर वे हमारे जमाई की चाहे मा हों चाहे भाई हों। और उस चक्रवर्ती को निकाल बाहर किये बिना मैं पानी नहीं पीने का। अरे वहाँ कौन है ? उस बाँभन को दूकान से बुला तो ला।

राय महाशय ने सोलहों आने अपना मतलब छिपाकर एक हुङ्कार किया।

गोकुल ने सङ्कुचित और अत्यन्त लज्जित होकर मृदु स्वर में कहा—नहीं, नहीं; अभी उन्हें बुलाने की जरूरत नहीं।

बनर्जी मास्टर दोनों ओर दोनों हाथ फैलाकर कहने लगे—नहीं, नहीं, गोकुल, चक्षुलज्जा (आँखों के शील) की जरूरत नहीं। उसे हम लोग न रख सकेंगे—किसी तरह नहीं। उसका हौसला बढ़ गया है। हम लोग उसे नहीं चाहते, यह कहे देता हूँ।

गोकुल ने उसी प्रकार विनीत कण्ठ से उत्तर दिया—किन्तु मा तो उनको निकालना नहीं चाहतीं। उन्होंने जिसे बहाल किया है उसे निकाल देने का अधिकार किसी को नहीं है। बाबूजी मुझको यह अधिकार नहीं दे गये हैं।

गोकुल ने फिर माथा झुका लिया। उसका यह बिलकुल अप्रत्याशित उत्तर और शान्त किन्तु दृढ़ कण्ठस्वर सुनकर अचरज के मारे दोनों की अक़्ल बेकाम हो गई। तनिक ठहर-कर बनर्जी ने कहा—तो यह कहो कि वह रहेगा?

गोकुल—जी हाँ। चक्रवर्ती मेरी हुकूमत से बाहर हैं।

बनर्जी ने डरकर कहा—तो फिर राय महाशय का कैसा क्या होगा?

गोकुल ने कहा—वे घर जायँ। मा उन्हें किसी तरह इस घर में रखने को तैयार नहीं हैं। और नौकरी छोड़ने से उनका जो नुक़सान हुआ होगा वह मैं, मा से पूछकर, उनके पास भेजवा दूँगा।

गोकुल उठकर वहाँ से चला गया। उसने किसी के उत्तर की प्रतीक्षा नहीं की।

सब लोगों ने समझा था कि इतने बड़े अपमान के बाद राय महाशय दम भर भी यहाँ न ठहरेंगे। किन्तु उनके सम्बन्ध में जो अटकल लगाई गई थी उसका कोई विशेष मूल्य आठ-दस दिन बीत जाने पर भी न देख पड़ा। शायद बेटी और जमाई पर असाधारण ममता होने के कारण ही उन्होंने तुच्छ बात का ख़याल करना मुनासिब नहीं समझा और घटनास्थल में उपस्थित रहकर रात-दिन उनके हित का उद्योग करने लगे। किन्तु इस हिताकांक्षा की प्रबल चपेटों में पड़कर एक ओर जैसे गोकुल पीड़ित और संक्षुब्ध होने लगा, वैसे ही दूसरी ओर घर में भवानी का भी हर घड़ी पल में बेतरह नाक में दम होने लगा। बहू और उसके बाप के छोड़े हुए शब्द-रूपी बाण खाते-पीते, उठते-बैठते भवानी के कानों में होकर लगातार हृदय को छेदने लगे।

उस दिन जब बर्दाश्त न कर सकीं तब उन्होंने बहू को बुलाकर पूछा—बहू, क्या गोकुल हमें इस घर में नहीं रहने देना चाहता?

बहू सोच-समझकर ही चुप हो रही—माथा झुकाकर नहों के खूँट काटने लगी। भवानी ने तनिक ठहरकर कहा—अच्छी बात है। यदि उसकी यही मर्ज़ी है तो आकर साफ़-साफ़ कह क्यों नहीं देता? इस तरह तुम्हारे भाई के द्वारा, बाप के द्वारा दिन-रात हमारा अपमान क्यों कराता है?

मज़ा यह कि भवानी ने एक बार यह सोचा तक नहीं कि ये क्षुद्राशय लोग अपने विषदन्त निकालकर इस सावधानी से बिलकुल छिपकर डँसते फिरते हैं जिसमें गोकुल को इस मामले की रत्ती भर भी ख़बर न मिलने पावे।

बहू तो अब कुछ की कुछ हो गई है। उसने उसी दम उत्तर दिया—सब लोग जानते हैं कि किसने किसका अपमान किया है! अपनी चीज़ को चोरों के हाथ से बचाने के लिए यदि मैं अपने बाप या भाई को दे देना चाहूँ तो इससे तुम्हारी छाती में क्यों सूल की हूल सी कसकती है मा? क्या एक व्यक्ति के लिए किसी दूसरे व्यक्ति का सत्यानाश कर डालना ही अच्छा है?

भवानी ने अपने तईं सँभालकर शान्तिपूर्वक पूछा—बहू, मैंने किसका सत्यानाश किया है?

बहू ने कहा—जिनका किया है वही तो गालियाँ देते हैं। इसमें क्या वे करें और क्या मैं करूँ! ईंट मारने से ढेले की चोट सहनी पड़ती है। इसमें नाराज़ होने से कहीं बनता है माजी!

मनोरमा चली गई।

भवानी सन्नाटे में आकर थोड़ी देर खड़ी रहीं, फिर धीरे-धीरे अपने कमरे में जाकर लेट रहीं।

स्वामी की जीवित दशा में इस गोकुल और इसकी दुलहिन का जैसा बर्ताव था, उसकी याद करके आज बहुत दिनों के बाद फिर उनकी आँखों से आँसू बहने लगे। आज वे अपने

मन से किसी तरह इस पछतावे को दूर न कर सकीं कि उन्होंने नासमझी से न सिर्फ अपने हाथों अपने पैरों पर कुल्हाड़ा मारा है, बल्कि लड़के की भी यही दशा कर दी है। इस तरह, वेरोक-टोक, गोकुल के नाम जायदाद न लिखवा दी जाती तो आज यह दुर्दशा न होती। विनोद कितना ही खोटा क्यों न हो, वह किसी तरह मा का इस तरह निर्यातन और अपमान न कर सकता।

किसी को यह पता न था कि विनोद गुप्त रूप से जीविका की तलाश कर रहा है। जब उसे कचहरी में एक नौकरी मिल गई और बस्ती के एक मुहल्ले में उसने छोटा-सा किराये का घर भी ठीक कर लिया तब, शाम के बाद, घर आकर ख़बर दी कि कल सबेरे वह अपने नये डेरे पर चला जायगा।

भवानी आग्रह से उठ बैठीं और कहने लगीं—बेटा विनोद, मुझे भी ले चल—मैं इस अपमान को अब सह नहीं सकती। तू जिस तरह रक्खेगा, मैं उसी तरह रहने को तैयार हूँ। इस घर से अब मेरा उद्धार कर दे—वे रोने लगीं।

इसके बाद एक-एक करके सारा इतिहास सुनकर विनोद बाहर जा रहा था कि बीच में गोकुल से भेंट हो गई। वह दूकान के काम-काज से छुट्टी पाकर घर आ रहा था। और दिन, इस दशा में, विनोद दूर से ही रास्ता बराकर निकल जाता था, आज खड़ा हो गया। गोकुल के समीप आ जाने पर कहा—कल सबेरे ही मा के साथ नये घर में उठ जाऊँगा।

गोकुल ने अकचकाकर पूछा—नये घर में ? तो क्या मुझसे पूछे बिना ही अलग घर लिया गया है ?

विनोद—हाँ।

"तो यह कहो कि एम० ए० की पढ़ाई बन्द कर दी !"

"हाँ।"

सन्ध्या के अँधेरे में विनोद को गोकुल के चेहरे से यह पता नहीं लगा कि इस ख़बर के सुनने से उसको कैसी मर्मकृत चोट लगी है। इस छोटे भाई के एम० ए० पास करने का सपना वह बचपन से ही देखता आ रहा है। जान-पहचानवालों में जहाँ कहीं जिस किसी ने कुछ पास-वास किया है—उसकी ख़बर पाते ही गोकुल बिना बुलाये वहाँ जाकर हाज़िर होता और आनन्द प्रकट करके अन्त में एम० ए० परीक्षा पूर्ण होने के लिए अपनी अत्यन्त दुश्चिन्ता प्रकट किया करता था। जो लोग मामले को समझते थे वे मुसकुरा देते थे। जो नहीं जानते थे वे उद्वेग का कारण पूछते तो 'छोटे भाई विनोद के आनर्स ग्रेजुएट' की चर्चा छिड़ जाती। और फिर बात-चीत के सिलसिले में अन्यमनस्क होने पर विनोद का सोने का मेडल भी निकल आता। किन्तु मख़मली बक्स-समेत वह चीज़ गोकुल के पाकेट में क्योंकर आ गई, इसका कोई कारण उसे याद न आता था। उसकी बड़ी लालसा थी कि सुनार को बुलाकर वह उससे इस दुर्लभ वस्तु को अपनी घड़ी की चेन में जुड़वा ले, और अब तक यह काम हो भी चुका होता यदि एक कठिनाई आड़ न आ गई होती। विनोद ने

डरवा दिया था कि यदि ऐसा करोगे तो मैं उसे (मेडल को) घड़ी-चेन समेत खींचकर तालाब में फेंक दूँगा। गोकुल बड़ी उत्कण्ठा से प्रतीक्षा कर रहा था कि एम० ए० का मेडल क्या जाने कैसा होगा और वह चीज़ जब घर में आ जायगी तब कहाँ किस प्रकार उसकी रक्षा करनी होगी।

अब एम० ए० की पढ़ाई बन्द कर देने की खबर पाकर गोकुल की छाती में गरम सेल सा छिद गया। किन्तु आज उसने जी-जान से अपने को सँभालकर कहा—सो तो ठीक है, किन्तु मा को नये घर में ले जाकर खिलाओ-पिलाओगे क्या ?

"यह पीछे देखा जायगा।" कहकर विनोद चला गया। वह भी मा की तरह बातचीत कम करता है। जो बातें वह अभी-अभी सुन आया था उनमें से एक भी उसने बड़े भाई पर प्रकट नहीं की।

गोकुल ने जैसे ही घर के भीतर पैर रक्खा, वैसे ही हरि की मा ने खबर दी कि माजी बुला रही हैं। गोकुल ने सीधे भवानी के कमरे में जाकर देखा कि वे इस दिया बत्ती के समय भी निर्जीव की भाँति बिस्तर पर लेटी हुई हैं। गोकुल के आने पर भवानी ने उठकर कहा—गोकुल, कल सवेरे ही मैं इस घर से जाऊँगी।

वह अभी-अभी विनोद से यह खबर पाकर मन ही मन जल-भुन रहा था; उसने तुरन्त उत्तर दिया—मा, तुम्हारे पैरों को हममें से किसी ने रस्सी से नहीं बाँध रक्खा है। जहाँ चाहो, जाओ; हमारा इसमें क्या ? चली जाओ तो पीछा छूटे।

गोकुल मुँह फुलाकर चला गया।

दूसरे दिन सवेरे भवानी जाने के लिए तैयार हो रही थीं। हरि की मा पास बैठकर तैयारी में सहायता कर रही थी। गोकुल ने आँगन में खड़े होकर ज़ोर से कहा—हरि की माई, कह दे आज उनका जाना न हो सकेगा।

हरि की मा ने अचरज के साथ पूछा—क्यों बड़े बाबू?

गोकुल ने कहा—आज दशमी है न? बाल-बच्चों का घर ठहरा, आज जाने से भला कैसे होगा? कह दे, आज मैं किसी तरह घर से न जाने दूँगा। जी चाहे तो कल चली जायँ—मैंने गाड़ी लौटा दी है।

बस, गोकुल उसी दम वहाँ से जाने को था कि मनोरमा उसे हाथ पकड़कर ओट में ले गई और धमकाकर बोली—जा रही थीं सो तुमने क्यों रोक लिया?

आज-कल स्त्री के साथ गोकुल की ख़ासी पटती थी। किन्तु आज उसने एकाएक मुँह फुलाकर गरजकर कहा—मेरी ख़ुशी, मैंने रोक लिया। घर की मालकिन बुरी घड़ी-साइत में यहाँ से चली जायँगी तो लड़के-बच्चे पटापट न मर जायँगे?

गोकुल वहाँ से तुरन्त चला गया।

"ढङ्ग तो देखो!" कहकर मनोरमा क्रोध-विस्मय के मारे और कुछ न कह सकी।

[१२]

दशमी के बाद एकादशी गई, द्वादशी भी गई। मा को दूसरे घर में भेजने लायक़ अच्छी साइत, अच्छा दिन, गोकुल को ढूँढ़ने पर भी न मिला। त्रयोदशी के दिन घर के पुरोहित महाराज के स्वयं आकर मुहूर्त बतलाते ही गोकुल ने अकारण गरम होकर कहा—तुम जिस पत्तल में खाओगे उसी में छेद करोगे ? जाओ, अपना काम करो। मैं मा को कहीं जाने नहीं दूँगा।

उस दिन धमकी खाने के बाद से मनोरमा स्वयं कुछ न कहती थी ! आज उसने अपने बाप को भेज दिया। निमाई ने आकर कहा—बाबू, यह काम तो अच्छा नहीं हो रहा है।

गोकुल कभी अखबार नहीं पढ़ता, किन्तु आज पढ़ रहा था। उसने पूछा—कौन-सा काम ?

"समधिनजी अपने सगे बेटे के डेरे पर जब अपनी मर्ज़ी से जाने को तैयार हैं तब हमारा उनके मार्ग में रोक-टोक करना ठीक नहीं।"

गोकुल ने पढ़ते-पढ़ते कहा—मुहल्लेवाले सुनेंगे तो हमको बदनाम करेंगे।

निमाई ने बहुत ही आश्चर्य्य करके कहा—बदनाम करने का मुझे तो कोई कारण देख नहीं पड़ता।

गोकुल अब तक ससुर से अदब से ही बातचीत किया करता था। आज उसने एकाएक बिगड़कर कहा—आपके देखने की

कोई आवश्यकता नहीं। अपनी मा को मैं किसी के पास न जाने दूँगा। बस, यह साफ़ बात है। जिससे जो बने, मेरा कर ले।

गोकुल की इस साफ़ बात को विनोद के कान में पहुँचते देर न लगी। प्रतिदिन रोक-टोक करके गाड़ी के ख़ाली वापस कर देने से वह मन ही मन चिढ़ गया था। आज बहुत ही नाराज़ होकर उसने भाई के पास आकर कहा—मैं आज मा को ले जाऊँगा। आप नाहक़ रोक-टोक न करें।

गोकुल ने अख़बार में बहुत अधिक मन लगाकर कहा—आज तो यह होने का नहीं।

विनोद ने कहा—ज़रूर होगा। मैं तो उनको अभी लिये जाता हूँ।

विनोद का क्रोध-पूर्ण कण्ठस्वर सुनकर गोकुल ने अख़बार को अलग फेंककर कहा—"लिये जाता हूँ" कहने से ही क्या होगा? बाबूजी मरते समय मा को मुझे सौंप गये हैं—तुम्हें तो कुछ सौंप गये नहीं। मैं उन्हें कहीं रहने को जाने देने का नहीं।

"भाई साहब, जो आप उनका भार सँभालते, बाबूजी की बात का ख़याल रखते तो मा को इस तरह दिन-रात अपमान और बेइज़्ज़ती न सहनी पड़ती। मा! बाहर आ जाओ, गाड़ी खड़ी है।" विनोद के यह कहकर पीछे देखते ही भवानी बाहर आ गईं। गोकुल को मालूम न था कि वे पहले से ओट में खड़ी हुई थीं। उन्हें एकदम गाड़ी में सवार होने को जाते देख गोकुल हक्का-बक्का-सा तनिक खड़ा रहा। अन्त में पीछे-पीछे गाड़ी के पास

पहुँचकर उसने कहा–इस तरह ज़बर्दस्ती चले जाने से हमारे साथ तुम लोगों का कोई वास्ता न रह जायगा, यह मैं कहे देता हूँ मा !

भवानी ने कुछ उत्तर नहीं दिया; विनोद ने कोचवान को गाड़ी हाँकने का हुक्म दिया। गाड़ी के रवाना होते ही गोकुल ने अकस्मात् रुँधे हुए स्वर से कहा—छोड़कर चल दीं मा, मैं क्या तुम्हारा बेटा नहीं हूँ ? क्या तुम्हें मेरी ख़बरगीरी न करनी चाहिए—मुझे आदमी न बनाना चाहिए ?

गाड़ी के पहियों की घरघराहट के मारे इस बात को भवानी ने तो स्पष्ट नहीं सुन पाया, लेकिन विनोद ने सुन लिया। उसने घूमकर देखा कि गोकुल धोती के खूँट से मुँह ढाँककर फुर्ती से चल दिया और भीतर जाकर विनोद के बैठके में, दरवाजा बन्द करके, लेट रहा। उसके इस व्यवहार को ओट से देखकर निमाई कुछ घबड़ा रहे थे, किन्तु थोड़ी देर में जब वह किवाड़ खोलकर बाहर निकला और ठीक समय पर स्नान-भोजन से छुट्टी पाकर दूकान पर चला गया तब उसकी आँखों, चेहरे और आचरण में किसी विशेष भय का चिह्न न देखकर निमाई ने आराम से साँस ली। खटका छोड़कर अब इस बार उन्होंने अपने काम में मन लगाया। अर्थात् साँप जिस तरह धीरे-धीरे अपने शिकार को निगलता है उसी तरह निमाई अपने जमाई को बड़ी ख़ुशी से हज़म करने के लिए तैयार करने लगे।

अब निमाई को लक्षण भी अच्छे, अपने अनुकूल, जँचने लगे। पिता की मृत्यु के बाद से ही गोकुल अत्यन्त चिड़चिड़ा

और असहनशील हो गया था, मामूली बात पर भी बिगड़ बैठता था; किन्तु जिस दिन भवानी घर से गईं उसी दिन से वह मानो दूसरा ही आदमी हो गया। किसी की किसी बात से न तो नाराज़ होता था और न उस बात को काटता ही था। इससे निमाई कितने ही .खुश क्यों न हों, किन्तु उनकी बेटी प्रसन्न न हुई। वह गोकुल को पहचानती थी। उसने जब देखा कि स्वामी खाने-पीने के मामले में झगड़ा-बखेड़ा नहीं करता, जो सामने पा जाता है, चुपचाप खाकर चौके से उठ जाता है, तब वह डर गई। इसी बात—खाने-पीने—का गोकुल को बचपन से बड़ा शौक़ था। खाना और दूसरे को खिलाना उसे बहुत भाता था। हर रविवार को वह अपने इष्टमित्रों का न्यौता करता था; किन्तु इस रविवार को उसकी कुछ भी तैयारी न देखकर मनोरमा ने चर्चा छेड़ी।

गोकुल ने उदासी के साथ जवाब दिया—वह तो सब मा के ही साथ गया। कौन रसोई बनाकर खिलावे-पिलावेगा ?

मनोरमा ने शेख़ी के साथ उत्तर दिया—रसोई करना क्या एक मा ही जानती हैं ? हम नहीं जानतीं ?

गोकुल ने कहा—तुम अपने बाप को, भाई को खिलाओ-पिलाओ। मुझे ज़रूरत नहीं।

मनोरमा की मा कालीघाट से लौटती बेर एक दिन बेटी के घर आ गईं। सौतेली सास नाराज़ होकर चली गई है, बेटी की उलटी-पलटी गिरस्ती को सँभाल देने की

आवश्यकता समझकर उन्होंने दो-चार दिन ठहर जाने का विचार किया।

देखते-देखते बिगड़ी गिरस्ती की मरम्मत हो जाने से, सुन्दर रूप से निर्वाह होने लगा। वे स्वयं कर्णधार होकर मज़बूती से पतवार पकड़कर, दिन पर दिन बिताने लगीं।

टोले-महल्लेवालों ने पहले तो इस बात पर आन्दोलन किया, किन्तु कलिकाल के धर्म ने आन्दोलन को शीघ्र ही ठण्डा कर दिया।

हरि की माई का घर इसी रास्ते पर है। वह बीच-बीच में आकर भेंट कर जाती थी। उसके मुँह से भवानी को गोकुल की नई गिरस्ती की ख़बर मिली, किन्तु उन्होंने इस सम्बन्ध में भला-बुरा कुछ नहीं कहा।

उस दिन रवाना होते समय वह जो गोकुल ने गाड़ी के समीप खड़े होकर रुँधे हुए गले से कहा था कि "उनका सब नाता टूट गया" सो तब, अभिमान के मारे, उन्होंने उस बात की कुछ परवा न की थी। किन्तु जब पूरा एक महीना बीत गया और गोकुल ने उनकी ख़बर तक नहीं ली तब उन्होंने मन ही मन ठण्डी साँस ली। बात यहाँ तक बढ़ जाने और नाराज़ी हो जाने के बाद भी उन्हें निःसंशय विश्वास नहीं हुआ कि गोकुल उन्हें और छोटे भाई विनोद को सचमुच छोड़ देगा। इसी से आज हरि की माई से घर के बीच समधी-समधिन की दृढ़ प्रतिष्ठा हो जाने की ख़बर पाकर भी वे सिर्फ़ गुपचुप रह गईं।

नये मकान में आकर विनोद दो ही चार दिन तक क़ाबू में रहा, इसके बाद उसने अपना स्वरूप प्रकट कर दिया। मा की कोई ख़बर वह प्रायः न लेता था; रात को घर रहता भी न था; सबेरे जिस समय घर आता उस समय दुःख और लज्जा के मारे भवानी उसके मुँह की ओर देख न सकती थीं।

इतना ही सुना था कि वह नौकरी करता है, किन्तु यह पता न था कि कहाँ किस ओहदे पर नौकर है और क्या वेतन मिलता है। अतएव इस समय उन्हें इतना ही सन्तोष था कि और चाहे जो हो, बेटे को उसके बाप की सम्पत्ति से वञ्चित करने में निमित्त बनकर उन्होंने कुछ अनुचित काम नहीं किया। क्योंकि गोकुल अपने सास-ससुर की उत्तेजना से प्रभावित होकर उन लोगों (मा और भाई) के प्रति कितना ही अन्याय क्यों न करे, वे अपने पति की बड़ी साध की दूकान को—कम से कम—बचा तो सकेंगी; स्वर्गीय स्वामी की बात को याद करके उन्हें इस चिन्ता में भी थोड़ा सा सुख मिलता था। इसी तरह दिन बीत रहे थे।

आज वैशाख की संक्रान्ति है। हर साल आज के दिन उनके यहाँ धूमधाम से ब्रह्मभोज हुआ करता था। किन्तु इस बार पास में पूँजी न होने से और बातचीत के सिलसिले में विनोद को दो बार सूचना देने पर भी उससे कुछ उत्तर न पाकर निरुपाय हो भवानी ने इस साल ब्राह्मणों के भोजन कराने का विचार छोड़ दिया था। एकाएक बड़े तड़के बहुत पुकार होने

पर हरि की माई के सदर दरवाज़ा खोलते ही घबराया हुआ गोकुल भीतर आया। उसके साथ कई आदमी थे। कोई घी और मैदा लिये हुए था, किसी के सिर पर मिठाइयों का टोकरा था, कोई तरकारियाँ लिये था और किसी के पास दूसरा ही सामान था। एक आदमी टोकरे भर पके आम लिये था। गोकुल ने भीतर पैर रखते ही कहा—अपने महल्ले के तमाम ब्राह्मणों को न्यौता दे आया हूँ—उस बन्दर के भरोसे तो मैं छोड़ नहीं सकता। मा कहाँ हैं? शायद अभी उठीं नहीं? जाता हूँ, काम-काज करने को आदमी भेजता हूँ। जैसी मा हैं वैसा ही बेटा है। किसी को परवा ही नहीं, मानो इसका मेरे ही सिर में दर्द है! हरि की माई, मा को ख़बर दे दे कि मैं घण्टे भर में ही लौटकर आता हूँ।

गोकुल जिस तरह फुर्ती से आया था उसी तरह चला गया।

भवानी बहुत पहले जाग गई थीं और ओट में खड़ी सब कुछ देख रही थीं। वहाँ से गोकुल के जाते ही अकस्मात् उनकी आँखों से आँसू बहने लगे। उस दिन इतवार था। 'शनिवार की रात' बिताकर बहुत दिन चढ़े विनोद घर आकर चकरा गया। हरि की मा से सब हाल सुनकर उसने मा को लक्ष्य करके कहा—दादा को ख़बर देकर उनसे इसी बीच यह सब न मँगवाकर मुझे ख़बर दी जाती तो सब हो जाता। ऐसा होने से मेरा तो अपमान होता है।

सब जान-बूझकर भी भवानी ने प्रतिवाद नहीं किया; चुप रह गई। गोकुल जब दुबारा आया तब उसने विनोद को देखकर भी नज़र हटा ली, मानो उसे देखा ही नहीं। वह काम-काज की जाँच करता हुआ घूमने लगा और ठीक समय पर ब्रह्मभोज होते ही—किसी से बिना कुछ कहे-सुने—बाहर जाने को तैयार था कि बनर्जी बाबू ने उसे सब के बीच में बुलाकर कहा—बैठो।

आज ये (मास्टर साहब) भी गोकुल से न्यौता पाकर भोजन करने पधारे थे। अतएव उसी के द्रव्य से परितोष-पूर्वक पेट-पूजा करके वे उस दिन के अपमान का बदला लेने को तैयार हुए। मजूमदार-परिवार का तो वे बहुत-सा अन्न हज़म कर चुके थे, इसी से निमाई राय के लिए उस दिन की लानत उन्हीं को बहुत अखरी थी। सबके सामने विनोद को लक्ष्य करके उन्होंने आँख मिचकाकर कहा—क्यों भैया, बड़े भाई की आज की चाल का तुम्हें भेद मालूम हुआ ?

बात के ढङ्ग से गोकुल कुछ संकुचित हो गया।

विनोद ने संक्षेप में कहा—नहीं।

बनर्जी (मास्टर साहब) ने मृदु गम्भीर हास्य करके कहा—तब तो मुक़दमा जीत चुके ! भैया ! बी० ए०, एम० ए० तो पास कर चुके, लेकिन तुम्हें यह पता नहीं कि मा को अपनी मुट्ठी में कर लेने को ही आज यह चाल चली गई है। मुक़दमे की जड़-बुनियाद तो आख़िर वही हैं न।

गोकुल का चेहरा स्याह हो गया, आँखें झिप गईं। "कभी नहीं, कभी नहीं मास्टर साहब" कहकर गोकुल फुर्ती से उठकर चला गया।

बनर्जी ने ऊँचे स्वर से चिल्लाकर कहा—भीतर पैर न रखने देना भैया, तुम्हारा सत्यानाश करके दम लेगा।

यह बात भी गोकुल ने सुनी।

विनोद लज्जा के मारे नीची गर्दन किये बैठा रहा। यह बात नहीं है कि वह अपने बड़े भाई को ठीक-ठीक न पहचानता हो। वह बखूबी जानता था कि किसी खास मतलब के लिए एक दूसरा काम कर गुज़रना गोकुल के स्वभाव के बाहर की बात है। इसी से उसने न सिर्फ़ बनर्जी की बातों पर सोलहों आने अविश्वास किया, वरन इतने आदमियों के आगे अपने बड़े भाई का अपमान उसे और भी बुरी तरह खटका।

निमन्त्रित लोगों के चले जाने पर विनोद ने भीतर जाकर देखा कि मा कमरे का दरवाज़ा बन्द किये लेटी हुई हैं। विनोद ने बिना पूछे ही समझ लिया कि बनर्जी की बात उन्होंने ज़रूर सुन ली है।

दूकान का काम-काज करके शाम को गोकुल ने अपने घर आकर देखा कि वहाँ एक बड़ा भारी मुँह फुलाने का अभिनय हो रहा है। स्वयं राय महाशय पलँग पर बहुत बुरा मुँह बनाये बैठे हैं और नीचे, फ़र्श पर, बैठी उनकी बेटी—हिमू को पास बिठाये—पिता के मुँह की नक़ल उतार रही है।

घर में पहुँचते ही गोकुल से राय महाशय ने पूछा—बाबू, अबोध की तरह आज तुमने जो यह हम लोगों का अपनी माता से अपमान कराया इसका प्रतीकार कैसे होगा ?

एक तो गोकुल का मन बहुत ही ख़राब था, दूसरे दिन भर के परिश्रम के मारे वह बेतरह थक गया था। तोहमत के ढङ्ग से ही वह आगबबूला हो गया। मनोरमा ने सिसककर रोते हुए कहा—जो तुम फिर कभी वहाँ गये तो मैं फाँसी लगाकर मर जाऊँगी।

बेटी का उत्साह देखकर राय महाशय ने और भी गम्भीर भाव से कहा—वह औरत क्या सीधी—

गोकुल बम-गोले की तरह फट पड़ा—"कहता हूँ, चुप रहो। मेरी मा के लिए वैसी बात कही जायगी तो गरदनियाँ देकर बाहर निकाल दूँगा।" यह कहकर वह आँधी की तरह वहाँ से चला गया।

राय महाशय और उनकी बेटी दोनों वज्राहत व्यक्ति की तरह एक दूसरे का मुँह देखते रह गये। गोकुल ने यह क्या किया! पूज्यपाद ससुर साहब का वह यह कैसा भयङ्कर अपमान कर बैठा!

[१३]

विनोद के मित्रों का ख़ासा जमघट हो गया था। ये लोग उसे प्रतिदिन मुक़द्दमे के लिए उकसाया करते थे। क्योंकि विनोद के हार जाने से उनका नुक़सान तो रत्ती भर भी न था; लेकिन जीत जाने से पाँचों घी में थीं। मुद्दत तक ऐशो-आराम के

सामान की फ़िक्र न होती। और, एक तरह से, मुक़दमे का दायर होना निश्चित हो चुका था। क्योंकि विनोद की तरफ़ से उसका जो मित्र एक दिन गोकुल के पास आपस में समझौता कर लेने का पैग़ाम लेकर गया था उसे गोकुल ने फटकार बताकर कहा था—उस अभागे पाजी को मैं फूटी कौड़ी भी देने का नहीं। जो जी में आवे, करे।

किन्तु इतनी बड़ी जायदाद का मुक़दमा दायर करने के लिए अच्छी रक़म हाथ में चाहिए। उसी के लिए विनोद को मुक़दमा दायर करने में देर हो रही थी।

बड़े भाई गोकुल पर विनोद को कितना ही अधिक क्रोध क्यों न हो, किन्तु उसी दिन से उसका दिल बीच-बीच में न जाने क्यों रोने-सा लगता था। उतने लोगों के आगे अपमानित होकर वह जिस तरह भाग गया था, उसके चेहरे के उस आर्त्त चित्र को विनोद किसी तरह भूल नहीं सकता था। हृदय के भीतर कोई मानो हरदम कहा करता था—अन्याय अन्याय, अत्यन्त अन्याय हो गया है। बिलकुल झूठा और कुत्सित अपवाद लगाकर दादा उस दिन बिदा किये गये हैं। वही दादा, ज़िन्दगी में अब भूलकर भी, इस रास्ते पर पैर रखने को नहीं, यह विनोद ने साफ़ समझ लिया।

देश के कृतविद्य युवकों में बहुतेरे विनोद के इष्ट-मित्र हैं। सभी की विनोद से गहरी सहानुभूति है। उस दिन सबेरे उन लोगों ने बाहर के कमरे में बैठकर मास्टर साहब को बुलाकर

बहुत वाद-विवाद के अन्त में यह तय किया था कि बात के फन्दे में गोकुल को फँसाये बिना सुभीता नहीं है। सभी ने समझ लिया था कि गोकुल बहुत ही भोला-भाला और मूर्ख है, अतएव उसे भड़काकर उसी की ज़बानी उसे छकाकर, फँसाकर, गवाही खड़ा कर लेना कुछ कठिन न होगा। तय हो गया कि अगले रविवार को सबेरे, बस्ती के दस मातबर आदमियों के साथ, गोकुल के घर जाकर उसे बातों के फन्दे में फाँसा जाय। इस सिलसिले में कितनी दिल्लगी, कितना विद्रूप अनुपस्थित अभागे गोकुल के माथे पर बरसा, कौन व्यक्ति क्या कहेगा और करेगा, सभी ने एक-एक करके उसका सबक़ सुनाया, सिर्फ़ विनोद चुपचाप माथा झुकाये बैठा रहा। अपने उत्साह की अधिकता के मारे उसके निरुत्साह पर किसी का ध्यान नहीं गया।

आज विनोद काम पर नहीं गया था, खा-पीकर घर में बैठा था। कोई एक बजने पर "क्यों हरि की माई, खाने-पीने से छुट्टी हो गई?" कहता हुआ गोकुल एकाएक भीतर आया।

हरि की माई ने चटपट बड़े बाबू के बैठने को आसन बिछा-कर कहा—नहीं बड़े बाबू, अभी छुट्टी नहीं हुई।

"नहीं हुई?" कहकर गोकुल ने अपने हाथ से आसन उठा-कर रसोईघर के दालान में बिछा लिया। बैठकर कहा—हरि की माई, एक गिलास ठण्डा पानी तो पिला। तगादा करने निकला था। इस दोपहरी की धूप में भटकते-भटकते हैरान हो गया हूँ। अम्मा कहाँ है?

भवानी रसोईंघर में ही थीं, किन्तु उस दिन की मास्टर साहब की बात का स्मरण करके अत्यधिक लज्जा के मारे एकदम सामने न आ सकीं। गोकुल ने समझ रक्खा था कि विनोद घर में नहीं है—काम पर चला गया है। उसने कहा—हरि की माई, सब झूठ है, बिलकुल झूठ। कलिकाल है, भला धर्म-कर्म रह सकता है? बाबूजी ने मरते समय मुझे मा को सौंपकर कहा था, 'बेटा गोकुल, लो ये तुम्हारी मा हैं।' मैं ठहरा सीधा आदमी— नहीं तो विनोद के बाप की मजाल न थी कि मा को ज़बर्दस्ती यहाँ ले आता! क्या मैं उनका बेटा नहीं हूँ? जो चाहूँ तो क्या इसी दम उन्हें ज़बर्दस्ती घर नहीं ले जा सकता? बाबूजी की यही तो असली वसीयत है—यह समझ ले हरि की माई। सिर्फ़ दो अक्षर लिख देने से ही विल नहीं हो जाता।

हरि की माई ने आँख के इशारे से जतला दिया कि विनोद घर ही पर है। बस, पानी का गिलास रखकर और जोड़ा पहनकर गोकुल तुरन्त चुपचाप वहाँ से चल दिया।

रात को नौ-दस बजे के समय एकाएक दूकान के चक्रवर्तीजी आये। उन्होंने पूछा—मा जी, बड़े बाबू अब तक घर नहीं पहुँचे। यहाँ से खा-पीकर कब गये?

भवानी ने अचरज करके कहा—उसने तो यहाँ कुछ खाया नहीं था। तगादा करने गया था। लौटते समय सिर्फ़ एक गिलास पानी पीकर चला गया।

चक्रवर्ती ने कहा—यह लो! आज बड़े बाबू की वर्षगाँठ है। झगड़ा करके घर पर कह आये हैं—'मा का प्रसाद खाने जाता हूँ।' सो देख पड़ता है, आज उन्हें फ़ाक़ा हो गया।

यह सुनकर भवानी का हृदय फटने लगा। विनोद पास ही कमरे में था। चक्रवर्ती की आहट पाकर पास आकर बैठ गया। उसने दिल्लगी करके पूछा—कहिए चक्रवर्तीजी, निमाई राय की मातहती में कैसी निभती है?

[१४]

चक्रवर्ती ने अचरज करके कहा—निमाई राय? राम का नाम लो—भला वह दूकान के भीतर पैर रख सकता है?

विनोद ने कहा—सुना करता हूँ कि वह दादा को निगल-कर बैठा है। क्या यह ठीक है?

चक्रवर्ती ने भवानी को दिखाकर हँसकर कहा—जब तक वे जीती हैं तब तक यह होने का नहीं छोटे बाबू। मुझे खदेड़-कर सर्वे-सर्वा होने को आये थे सही, किन्तु मा के एक ही हुक्म से सब गड़बड़ हो गया। अब धोखे-धड़ी से जो मिल जाय सो भले मिल जाय, दूकान में हाथ लगाने से तो रहे।

चक्रवर्ती ने उस दिन का सब हाल सुनाकर कहा—बड़े बाबू भोले-भाले आदमी हैं; किसी का दाँव-पेंच वे क्या जानें? किन्तु इससे क्या हुआ, पितृ-मातृ-भक्ति तो अचल है। वह जो कह दिया कि मा के हुक्म को टालने की शक्ति नहीं है, सो घरवालों के

हज़ार रोने-पीटने और लड़ने-झगड़ने पर भी उसके विपरीत उनसे कुछ न कराया जा सका। कह दिया—"मेरे पिता का हुक्म—मा का हुक्म !" मैं जैसा मुखिया पहले था वैसा ही हूँ छोटे बाबू।

विनोद की आँखों में जलन पैदा होकर आँसू भर आये।

चक्रवर्ती कहने लगे—छोटे बाबू, ऐसा बड़ा भाई क्या किसी का होता है ? मुँह से विनोद ही विनोद कहा करते हैं। 'मेरे विनोद की तरह किसी ने पास नहीं किया, मेरे विनोद की तरह लिखना-पढ़ना किसी ने नहीं सीखा, मेरे विनोद की तरह भाई किसी के नहीं हुआ।' छोटे बाबू, लोगों ने तुम्हारी तरह-तरह की शिकायतें उनसे की हैं, लेकिन मेरे पास आकर मुसकुराकर कहते हैं—चक्रवर्तीजी, लोग डाह के मारे मेरे भाई की बदनामी फैलाते हैं। बदमाशों ने मुझे ऐसा नादान समझ लिया है कि मैं उनकी बातों पर विश्वास कर लूँगा !

तनिक ठहरकर कहा—अभी उस दिन की बात है, एक काशी का पण्डित आया और तुम्हारे मन को सुधार देने के लिए एक सौ आठ सोने के तुलसीदलों का दाम कोई पाँच सौ रुपया बड़े बाबू से ऐंठ ले गया। मैंने बहुत-बहुत रोका, किन्तु उन्होंने किसी तरह नहीं सुना; कहा—मेरे विनोद को यदि सुमति हो जाय, मेरा विनोद यदि एम० ए० पास हो जाय, तो पाँच सौ रुपये की मुझे कुछ परवा नहीं।

विनोद ने आँखें पोंछकर आर्द्र स्वर में कहा—चक्रवर्तीजी, मैंने भी सुना है कि कितने ही आदमी मेरा नाम लेकर दादा को ठग ले जाते हैं।

चक्रवर्ती ने धीमा स्वर करके कहा—"छोटे बाबू, इस जयलाल बनर्जी ने क्या कम रुपया मार लिया है? वही लुच्चा तो असल में गुड़ का बाप कोल्हू है।" अब उसने बड़े मालिक की मृत्यु के पश्चात् वही विनोद के पते-ठिकाने के प्रकट किये जाने की कहानी कह सुनाई।

भवानी ने किसी बात पर कुछ कहा-सुना नहीं। उनकी आँखों से तो सावन-भादों की-सी धारा बह रही थी।

चक्रवर्ती के जाने पर विनोद आराम करने को बिस्तरे पर जा लेटा; किन्तु नींद उसे नाम लेने को भी न आई। क्यों यह एक अस्वाभाविक घटना हो गई, पिता क्यों उसे इस प्रकार वञ्चित कर गये, दादा क्यों उसे कुछ देने को तैयार नहीं—चक्रवर्ती के मुँह से आज वही इतिहास सुनकर वह लगातार इसी पर सोचने-विचारने लगा।

× × ×

विनोद के इष्ट-मित्र विशेष उद्योगी होकर, बस्ती के विश्वसनीय आदमियों को साथ लेकर रविवार को सवेरे गोकुल के बैठके में पहुँचे। गोकुल दूकान जाने को तैयार हो रहा था, इन भले आदमियों के अकस्मात् आ पहुँचने से ठिठक गया। ख़ासकर डिपटी बाबू और सदरआला गिरिश बाबू को देखकर वह

सोच न सका कि उन्हें कहाँ बैठावे और क्या करे। विनोद चुपचाप उदास मुँह किये एक ओर जा बैठा। उसका चेहरा देखने से जान पड़ता था, मानो बलिदान के लिए वह पकड़ लाया गया है।

बनर्जी बाबू मौजूद थे। उन्होंने बात का सिलसिला छेड़ा। देखते-देखते गोकुल का चेहरा और आँखें लाल हो गईं। उसने कहा—अच्छा, इसी के लिए यह जमाव है! जाइए, आप लोग नालिश कीजिए। मैं उस अभागे को एक पैसा भी देने का नहीं। वह शराबी है।

और लोग तो चुप बैठे रहे। बनर्जी बाबू ने मुँह बनाकर हँसकर कहा—माना कि शराबी है, किन्तु तुम उसके हिस्से की जायदाद को रोक रखनेवाले कौन होते हो? इसी का क्या सबूत कि तुमने अपने बाप के मरते समय जालसाजी करके विल नहीं लिखा लिया है?

गोकुल ने ग़ुस्से के मारे आगबबूला होकर, चिल्लाकर, कहा—मैंने जालसाज़ी की है? कौन साला मुझे जालसाज़ कहता है?

गिरिश बाबू पुराने आदमी ठहरे। उन्होंने नर्मी से कहा—गोकुल बाबू, इतना उतावलापन न कीजिए; तनिक शान्त होकर उत्तर दीजिए।

बनर्जी बाबू को पिछले दिनों की बहुत सी बातें मालूम थीं, इसी से उन्होंने आँखें तरेरकर कहा—तब तो तुम्हारी मा को अदालत में जाकर गवाही देनी होगी गोकुल!

बनर्जी ने जो सोचा था वही हुआ। गोकुल ने उन्मत्त होकर कहा—क्या मेरी मा को अदालत में खड़ा करेगा? गवाह के कठघरे में? ले जाओ तुम लोग सारी जायदाद, मुझे न चाहिए। मा को मैं अदालत में न ले जाऊँगा—मा के साथ मैं काशी जा रहूँगा।

निमाई राय भी मजलिस में मौजूद थे। उन्होंने आँख से इशारा करके कहा—तनिक ठहरो तो गोकुल! करते क्या हो, क्या बक रहे हो?

गोकुल ने उनकी बात सुनी ही नहीं। सबके आगे दाहना पैर रोपकर विनोद को लक्ष्य करके खूब चिल्लाकर कहा—आ, अभागे इधर आ, मैंने यह पैर आगे बढ़ा दिया है—छू करके कह, "तेरा बड़ा भाई जालसाज़ दग़ाबाज़ है।" जो मैं सारी जायदाद से इसी दम अलग न हो जाऊँ तो वैकुण्ठ मजूमदार का बेटा नहीं।

डर के मारे निमाई सिटपिटाकर बोले—हाय-हाय, क्या करते हो बबुआ, करने न दो उन्हें नालिश,—जो फ़ैसला होगा वही होगा—यह सौगन्ध और दिलासा किसलिए? चलो-चलो, भीतर चलो।

अब निमाई गोकुल का हाथ पकड़कर खींच-तान करने लगे। किन्तु विनोद ने न तो सिर उठाकर देखा और न किसी बात का उत्तर दिया। वह जैसा बैठा था उसी तरह चुप मारे बैठा रहा।

गोकुल ने झटके से अपना हाथ छुड़ाकर कहा—नहीं, मैं यहाँ से तिल भर भी पीछे पैर न रक्खूँगा।

उसने ऊपर की ओर दृष्टि करके कहा—बाबूजी सुनते हैं, उन्होंने मरते समय कहा था कि नहीं—'गोकुल, यह तुम दोनों भाइयों की जायदाद है। विनोद जब सुधर जाय तब उसका हिस्सा उसे सौंप देना।' ऊपर से बाबूजी देख रहे हैं, उस जायदाद की रक्षा मैं यक्ष की तरह कर रहा हूँ। कब वह सुधरेगा, घर में लौट आवेगा—रात-दिन भगवान् को पुकारता हूँ—और वह मुझे जालसाज़ बनाता है! अभागे आ, आगे आ। मेरा पैर छूकर इन लोगों के आगे कह कि तेरे बड़े भाई ने चोरी करके तेरा हिस्सा हज़म कर लिया है।

इष्ट-मित्र लोग विनोद को चारों ओर से ठेलने लगे, किन्तु वह उठा नहीं। बनर्जी बाबू (मास्टर साहब) ने खड़े होकर उसका हाथ पकड़कर ज़ोर से खींचते हुए कहा—कह न दो विनोद पैर छूकर। तुम्हें डर काहे का है? ऐसा मौक़ा कब मिलेगा?

विनोद ने खड़े होकर कहा—हाँ, ऐसा अच्छा मौक़ा फिर मिलने का नहीं।

उसने दो क़दम आगे बढ़कर कहा—तुम्हारा पैर छूकर कहता हूँ दादा कि मैं तुम्हें पहचानता हूँ। तुम्हारा पैर छूकर जो मैं तुम्हीं को जालसाज़ कहूँगा तो मेरा दाहना हाथ यहीं पर टूटकर गिर पड़ेगा। मैं वह बात नहीं कह सकता, किन्तु आज